'जय जिनशासन प्रकाशन' का प्रथम पुष्प

卐 जैनं जयति शासनम् 卐

॥ श्री महावीराय नमः ॥

⋆ श्रीमत्-सुदर्शन-गुरवे नमः ⋆

श्रावक-प्रतिक्रमण-सूत्र

❊ ❊ ❊

मूल, अर्थ, टिप्पणी, विधि,
चित्र एवं विवेचन-सहित

: प्रकाशक एवं प्राप्ति-स्थान :
जय जिनशासन प्रकाशन
रवीन्द्र जैन (मो0 9810287446)
212, वीर अपार्टमैण्ट, सैक्टर 13, रोहिणी, दिल्ली - 85
Email : jaijinshaasanprakaashan@gmail.com

विनतिः इस पुस्तक को अधिक से अधिक प्रकाशित करा के वितरण करें।

Printing Cost : 25.00/-

प्रतिक्रमण का लाभ

प्रश्नः पडिक्कमणेणं भन्ते! जीवे किं जणयई?

उत्तरः पडिक्कमणेणं वय-छिद्दाइं पिहेइ। पिहिय-वय-छिद्दे पुण जीवे निरुद्धासवे, असबल-चरित्ते, अट्ठसु पवयण-मायासु उवउत्ते, अपुहत्ते, सुप्पणिहिए विहरइ।

प्रश्नः अहो भगवन् ! प्रतिक्रमण से जीव को क्या प्राप्त होता है?

उत्तरः प्रतिक्रमण से जीव अपने ग्रहण किए हुए व्रतों के छिद्रों (दोषों) को बन्द कर देता है। व्रतों के छिद्रों को बन्द करने वाला जीव आस्रवों (मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय व अशुभ योग) का निरोध कर देता है, निर्दोष (अशबल) चारित्र का पालन करता है, समिति-गुप्तिरूप अष्ट प्रवचन-माताओं के पालन में सदा उपयोग-युक्त रहता है और चारित्र में एकरूप होकर संयम में सम्यक् रूप से समाहित होकर विचरण करता है।

—उत्तराध्ययन सूत्र-29/12

आमुख

प्रतिक्रमण जैन धर्म-साधना का एक विशिष्ट पारिभाषिक शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ है–पुनः लौटना। अपनी स्वभाव-दशा से निकल कर विभाव-दशा में गई हुई आत्मा का पुनः अपनी स्वभाव-रूप सीमा में प्रत्यागमन करना प्रतिक्रमण है। आचार्य हेमचन्द्र सूरि ने लिखा है–

स्वस्थानाद् यत् पर-स्थानं, प्रमादस्य वशाद् गतः।
तत्रैव क्रमणं भूयः, प्रतिक्रमणमुच्यते।।

अर्थात् प्रमाद के कारण शुभ योगों में से अशुभ योगों में गए हुए अपने आपको पुनः शुभ योगों में लौटा लाना प्रतिक्रमण है।

जैन श्वेताम्बर परम्परा (स्थानकवासी एवं तेरापन्थी) 32 आगमों को मान्य करती है। इनमें अन्तिम सूत्र का नाम 'आवश्यक सूत्र' है। आवश्यक के छः भेद हैं–सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वन्दन, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग और प्रत्याख्यान। इन सभी का लक्ष्य विभाव-पतित आत्मा को पुनः स्वभाव-दशा में स्थिर करना (प्रतिक्रमण) ही होने से सम्पूर्ण आवश्यक-सूत्र की ही 'प्रतिक्रमण' संज्ञा रूढ़ हो गई। अतःएव नाम-दृष्ट्या भिन्न-भिन्न होने पर भी प्रयोजन समान होने के कारण 'आवश्यक' और 'प्रतिक्रमण' परस्पर एकार्थक ही मान लिए जाते हैं।

जैन आगम-साहित्य में आवश्यक-सूत्र का अपना विशिष्ट स्थान है। आवश्यक-निर्युक्ति, आवश्यक-चूर्णी, आवश्यक-हरिभद्रीया-वृत्ति, आवश्यक-मलयगिरि-वृत्ति प्रभृति ग्रन्थों में 'आवश्यक' के विषय में सविस्तार विचार चर्चाएँ की गई हैं। अनुयोगद्वार-चूर्णी में लिखा है–जो गुण-शून्य आत्मा को प्रशस्त भावों से आवासित (सुगन्धित) करे, वह आवश्यक (आवासक) है'। अनुयोग-द्वार (मलधारी टीका) में लिखा है–'जो समस्त गुणों का निवास-स्थान (आवास) है, वह आवश्यक है'।

'आवश्यक' जैन-साधना का प्राण है। वह जीवन-शुद्धि और दोष-परिमार्जन का एक मनोरम जीवन्त भाष्य है। इसके सम्यक् अनुष्ठान से साधक अपनी आत्मा को निरखता और परखता है। जैसे वैदिक-परम्परा में सन्ध्या है, बौद्धों में उपासना है, यहूदी और ईसाइयों में प्रार्थना है तथा इस्लाम में नमाज है, वैसे ही जैन धर्म में दोष-शुद्धि और गुण-वृद्धि के लिए आवश्यक-सूत्र है।

षड्-आवश्यक का विधान श्रमण हो या श्रमणी, श्रावक हो या श्राविका, चारों के लिए प्रातः-सायं उभयकाल जरूरी है। प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के श्रमण-श्रमणी प्रातः एवं सायंकाल आवश्यक करते हैं। यदि वे न करें तो अपने श्रमण-धर्म से च्युत हो जाते हैं। मध्य के बाईस तीर्थंकरों के साधु-साध्वी जब दोष लगें, तभी प्रतिक्रमण करके शुद्ध हो जाते हैं। प्रतिक्रमण के लिए कोई भी अस्वाध्याय-काल — औदारिक, आकाशीय या काल-सम्बन्धी नहीं होता। शरीर में रोग, वार्धक्य या अन्य कोई असामर्थ्य आदि का कारण हो, तो भी अन्य साधु/साध्वी से सुनने का विधान है। राज-आक्रमण, सहवासी श्रमण/श्रमणी की मृत्यु होने पर भी इसे करना अनिवार्य है।

प्रतिक्रमण के विषय में आगम में विविध दृष्टियों से विवेचन प्राप्त होता है। स्थानांग-सूत्र (5-222) में पाँच प्रकार के प्रतिक्रमणों का नामोल्लेख मिलता है—1.आस्रवद्वार-प्रतिक्रमण 2. मिथ्यात्व-प्रतिक्रमण 3. कषाय-प्रतिक्रमण, 4. योग-प्रतिक्रमण 5. भाव-प्रतिक्रमण।

1. प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह, इन पाँचों आस्रवों से निवृत्त हो, पुनः इनका सेवन न करना 'आस्रव-द्वार-प्रतिक्रमण' है। 2. उपयोग (जान बूझकर), अनुपयोग (अनजाने) या सहसाकार (अकस्मात्) से आत्मा के शंका, कांक्षा आदि मिथ्यात्व-परिणाम को प्राप्त हो जाने पर उससे निवृत्त होना 'मिथ्यात्व-प्रतिक्रमण' है। 3. क्रोध, मान, माया व लोभ-रूप कषाय-परिणाम से आत्मा को निवृत्त करना

कषाय-प्रतिक्रमण है। 4. मन, वचन और काया के अशुभ व्यापार को प्राप्त होने पर उनसे आत्मा को पृथक् करना 'योग-प्रतिक्रमण' है। 5. पूर्वोक्त आस्रवद्वार, मिथ्यात्व, कषाय और अशुभ योगों के विविध भेदों मे तीन करण, तीन योगों से प्रवृत्त न होना 'भाव-प्रतिक्रमण' है।

काल की दृष्टि से आगम में प्रतिक्रमण के पाँच प्रकार बतलाए हैं, यथा–

1. **दैवसिक**–दिन में लगे अतिचारों (दोषों) की शुद्धि के लिए दिन के अन्त (सायंकाल) में किया जाने वाला प्रतिक्रमण।

2. **रात्रिक**–रात्रि में लगे अतिचारों की शुद्धि के लिए रात्रि के अन्त में किया जाने वाला प्रतिक्रमण।

3. **पाक्षिक**–प्रत्येक 15 दिन के पश्चात् अमावस्या और पूर्णिमा के सायंकाल में, सम्पूर्ण पक्ष में आचरित अतिचारों का विचार करके किया जाने वाला प्रतिक्रमण।

4. **चातुर्मासिक**–वर्ष में प्रत्येक चार मास के पश्चात् कार्तिकी, फाल्गुनी और आषाढी पूर्णिमा के दिन, चार महीने में लगे हुए दोषों की आलोचना करके किया जाने वाला प्रतिक्रमण।

5. **सांवत्सरिक**–भाद्रपद शुक्ला पंचमी के सांयकाल में वर्ष-भर में लगे दोषों का विचार करके किया जाने वाला प्रतिक्रमण।

आचार्य भद्रबाहु ने प्रतिक्रमण को अतीत काल में लगे दोषों का परिशोधक बताने के साथ-साथ वर्तमान और भविष्यत् काल के दोषों का शोधक भी कहा है। अतीतकालीन दोषों की शुद्धि आलोचना से, वर्तमान-कालिक की संवर-साधना के द्वारा और भविष्यत्-काल के दोषों की परिशुद्धि भावी दोषों का प्रत्याख्यान करने से हो जाती है।

आवश्यक सूत्र के छः अंग–जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि

आवश्यक-सूत्र के छः अंग हैं। इनका साधना-जीवन में उद्देश्य और महत्त्व इस प्रकार है–

1. सामायिक — समभाव की साधना।

2. चतुर्विंशतिस्तव — 24 तीर्थंकरों की स्तुति।

3. वन्दन — गुरु-भगवन्तों को नमस्कार एवं उनका गुण-कीर्तन।

4. प्रतिक्रमण — दोषों की आलोचना।

5. कायोत्सर्ग — शरीर के प्रति ममता का त्याग।

6. प्रत्याख्यान — आहार आदि का त्याग।

श्रावक-प्रतिक्रमण–यदि प्रतिक्रमण के स्वरूप को संक्षेप में समझें, तो धर्मस्थान में आकर दिनभर में कृत अपने दोषों का चिन्तन करना, फिर गुरु के समक्ष उनकी आलोचना करना, पुनः दृढतापूर्वक अपनी आत्मा को स्वीकृत व्रतों मे स्थापित करना तथा अन्त में अतिचार-शुद्धि-हेतु योग्य प्रायश्चित्त स्वीकार करना, यह सारे प्रतिक्रमण का सार है। साधु और श्रावक के छः आवश्यक इसी उद्देश्य का सविधि विस्तार हैं। वर्तमान साधु-प्रतिक्रमण में जहाँ ज्ञान के अतिचार, दर्शन-विशुद्धि, पाँच समिति, तीन गुप्ति, और पाँच महाव्रत व रात्रि-भोजन-विरमण के दोषों का चिन्तन, आलोचन और प्रतिक्रमण मुख्य है, वहाँ श्रावक-प्रतिक्रमण में सम्यक् ज्ञान, सम्यक्त्व, 12 व्रत और संलेखना में लगे अतिचारों का चिन्तन, आलोचन और प्रतिक्रमण बताया गया है।

श्रावक के बारह व्रत

सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन और सम्यक् चारित्र, ये तीनों समवेत-रूपेण मोक्ष के मार्ग हैं। सम्यग्ज्ञान से जीव, अजीव आदि पदार्थों की जानकारी होती है, सम्यग्दर्शन से उनके प्रति श्रद्धा तथा सम्यक्चारित्र से आत्मा में संचित प्राचीन कर्मों के विनाश के साथ-साथ वर्तमान में प्रवेश करने वाले नवीन कर्मों का निरोध भी होता है। सम्यक्-चारित्र के दो विभाग

हैं–अणगार-चारित्र और सागार-चारित्र। प्रथम में साधु-साध्वी के पाँच महाव्रत आते हैं। इनमें पाप का त्याग तीन करण और तीन योग से किया जाता है। सागार-चारित्र में श्रावक के पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत आते हैं। दोषों को पतला करके कर्मों को पतला करने वाले अथवा महाव्रत की अपेक्षा छोटे व्रत 'अणुव्रत' कहलाते हैं। पाँच अणुव्रतों में उत्तरोत्तर गुणवृद्धि करने वाले व्रत 'गुणव्रत' कहलाते हैं। इन आठ व्रतों की निरन्तर सुरक्षा और पुष्टि करने वाले व्रत 'शिक्षाव्रत' कहलाते हैं। इन सभी बारह व्रतों में पाप-त्याग अपनी-अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य के अनुसार विभिन्न करण एवं योगों के अनुसार किया जाता है। इनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है–

1. **स्थूल-प्राणातिपात-विरमण-व्रत**–दो करण एवं तीन योग से निरपराधी त्रस जीवों (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय एवं पंचेन्द्रिय) को संकल्प करके, मारने की बुद्धि से मारने का पच्चक्खाण एवं स्थावर जीवों (पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय एवं वनस्पतिकाय) की हिंसा की मर्यादा करना।

2. **स्थूल-मृषावाद-विरमण-व्रत**–दो करण एवं तीन योग से कन्या, गाय आदि पशु, भूमि, धरोहर एवं साक्षी के सम्बन्ध में मोटा झूठ बोलने का पच्चक्खाण।

3. **स्थूल-अदत्तादान-विरमण-व्रत**–दो करण तीन योग से सेंध लगाकर, जेब काटकर, ताला तोड़कर, मार्ग में लूटकर, पड़ी हुई वस्तु को उठाकर आदि स्वामी की किसी वस्तु को बिना आज्ञा लेने का पच्चक्खाण।

4. **स्वदार-सन्तोष-अणुव्रत**–एक करण एवं एक योग से स्व-पत्नी या स्व-पति के अतिरिक्त मैथुन-सेवन का पच्चक्खाण। इस व्रत में देव-देवी-सम्बन्धी मैथुन-सेवन का पच्चक्खाण दो करण एवं तीन योग से तथा मनुष्य-तिर्यंच-सम्बन्धी एक करण-एक योग से किया जाता है।

5. **स्थूल-परिग्रह-परिमाण-व्रत**–एक करण एवं तीन योग से

क्षेत्र-वास्तु, हिरण्य-सुवर्ण, धन-धान्य, दास-दासी एवं धातु-पदार्थों का मर्यादा से अधिक संग्रह करने का पच्चक्खाण।

6. **दिशा-व्रत**–एक करण-तीन योग से ऊँची, नीची, तिरछी दिशाओं में गमनागमन की निर्धारित मर्यादा से आगे न जाने का पच्चक्खाण।

7. **उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत**–इसके दो भेद हैं– भोजन-सम्बन्धी और कर्म-सम्बन्धी। भोजन में एक करण-तीन योग से उबटन, दातुन आदि 26 प्रकार के द्रव्यों का मर्यादा से अधिक भोगने का पच्चक्खाण। कर्म-सम्बन्धी में घोर हिंसाकारक, महाकर्म-बन्धक इंगाल-कर्म, वन-कर्म आदि हिंसक व्यापारों को करने का पच्चक्खाण।

8. **अनर्थ-दण्ड-विरमण-व्रत**–दो करण-तीन योग से अशुभ-ध्यान-आचरित, प्रमाद-आचरित आदि अनर्थ-दण्ड के सेवन का पच्चक्खाण।

9. **सामायिक-व्रत**–दो करण-तीन योग से दो घड़ी (48 मिनट) के लिए पाप-युक्त कार्यों के सेवन का पच्चक्खाण।

10. **देशावकाशिक-व्रत**–दो करण-तीन योग से मर्यादित भूमि में द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव-सम्बन्धी मर्यादा के उपरान्त अन्य पदार्थ-सेवन का पच्चक्खाण।

11. **पौषध-व्रत**–प्रतिपूर्ण आठ प्रहर के लिए दो करण-तीन योग से तीन या चार आहारों का त्याग करके, अब्रह्मचर्य, फूलमाला, विलेपन, शस्त्र-मुसलादि के सेवन का पच्चक्खाण।

12. **अतिथि-संविभाग-व्रत**–श्रमण-निर्ग्रन्थों को प्रासुक-एषणीय अशन, पान, खाद्य एवं स्वाद्य आदि वस्तुओं के द्वारा प्रतिलाभित करना।

योग एवं करण–कोई भी शुभ या अशुभ कार्य तीन प्रकार से एवं तीन साधनों के द्वारा किया जाता है। कार्य का करना 'करण' तथा कार्य के करने का साधन 'योग' कहलाता है। 'करण' तीन हैं–करण-स्वयं कार्य करना। करावण-अन्य व्यक्ति से कार्य कराना। अनुमोदन-कार्य करने वाले

व्यक्ति का समर्थन करना। योग भी तीन है–मन, वचन और काया। 'एक करण-एक योग' का अर्थ है–काया से स्वयं करना। 'एक करण-तीन योग' का अर्थ है—मन, वचन व काया से स्वयं करना। 'दो करण-तीन योग' का अर्थ है–मन, वचन व काया से स्वयं करना तथा अन्य से कराना।

व्रत-भंग के चार सोपान– स्वीकृत व्रत के भंग होने के चार सोपान अर्थात् चार क्रम हैं, यथा–

1. **अतिक्रम**–मन में व्रत के भंग करने के विचार का उदय होना (यथा–मैं अमुक व्यक्ति को मारूँ)।

2. **व्यतिक्रम**–व्रत-भंग करने के उद्देश्य से साधन-सामग्री (चाकू, तलवार, बन्दूक आदि) एकत्रित करना।

3. **अतिचार**–व्रत-भंग से पूर्व की स्थिति या आंशिक-रूप से व्रत का भंग (अवयव-छेद आदि)।

4. **अनाचार**–व्रत का भंग होना (मार देना)।

ध्यान रहे, प्रतिक्रमण के द्वारा अतिचार तक की शुद्धि ही होती है। अनाचार होने पर उसकी शुद्धि-हेतु प्रतिक्रमण के आगे के अन्य प्रायश्चित्तों का विधाान है। श्रावक-प्रतिक्रमण में कुल 99 अतिचारों—ज्ञान के 14, दर्शन के 5, बारह व्रतों के 60, कर्मादान के 15 एवं संलेखना के 5 का वर्णन है।

पंचांग वन्दना–सभी छः आवश्यकों को प्रारम्भ करने से पूर्व आज्ञा प्राप्त करने के लिए पंचांग-वन्दना करने का विधान है। यदि साधु-साध्वी विराजित हों तो उनको वन्दना करके आज्ञा प्राप्त की जाती है। उनकी अनुपस्थिति में पूर्व या उत्तर दिशा अथवा दोनों के मध्यवर्ती ईशान-कोण में वन्दना करके आज्ञा लेनी चाहिए। दो पंजे, दो घुटने एवं एक मस्तक (या दो घुटने, दो हाथ एवं एक मस्तक) का भूमि से स्पर्श कराते हुए, तीन बार गुरु-वन्दन-सूत्र (तिक्खुत्तो) पढकर पंचांग वन्दना होती है। राजस्थान आदि कुछ प्रान्तों में उठ-बैठकर वन्दना करने की परम्परा है, परन्तु उत्तर-भारत में

शुरू से ही घुटने टिकाकर वन्दना करने की परिपाटी रही है। सुविधा,सभ्यता, एकरूपता, प्रतिलेखना व प्रमार्जन की सुगमता की दृष्टि से यह विधि अधिक तर्कसंगत है।

ध्यान में चतुर्विंशति-स्तव की संख्या–सन् 1952 में बृहत्–साधु-सम्मेलन, सादड़ी (राजस्थान) की सर्व-सम्मत- व्यवस्थानुसार पंचम कायोत्सर्ग-आवश्यक में दैवसिक व रात्रिक प्रतिक्रमण में चार 'लोगस्स' का, पाक्षिक में आठ का, चातुर्मासिक में बारह का तथा सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में बीस 'लोगस्स' के ध्यान करने का विधाान किया गया है। यद्यपि इससे पूर्व कई परम्पराओं में सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में 40 लोगस्स का ध्यान होता था, तथा कहीं-कहीं अब भी होता है, परन्तु व्यापक एकरूपता के दृष्टिगत बीस का ही ध्यान करना चाहिए।

श्रमण-सूत्र के पाठ–राजस्थान आदि प्रदेशों के कुछ प्रतिक्रमणों में 'श्रमण-सूत्र' भी जोड़ा जाने लगा है। श्रावक- प्रतिक्रमण में नए सिरे से 'श्रमण-सूत्र' को जोड़ना तथा उसके लिए प्रतिमाधारी-श्रावक आदि की बात कहकर औचित्य सिद्ध करने कर प्रयास करना, मात्र आग्रह ही कहा जा सकता हैं। यूँ तो सम्पूर्ण 32 शास्त्रों के पाठ ही पठनीय एवं स्मरणीय हैं, पर सभी प्रतिक्रमण में स्थान नहीं पा सकते। साधु-साध्वी का चारित्र सर्वविरति-रूप है, उसमें पाप का त्याग तीन करण-तीन योग से होता है। श्रावक-श्राविका का चारित्र देशविरति-रूप है, उसमें पाप का त्याग दो करण-तीन योग, एक-करण-तीन योग तथा एक करण-एक योग-रूप विविध भंगों से होता है। श्रावक-प्रतिक्रमण के प्रारम्भ में ही 'चारित्राचारित्र' के अतिचारों के चिन्तन के लिए ही कायोत्सर्ग की प्रतिज्ञा (पृष्ठ 13 एवं 14) की गई है, परिपूर्ण-चारित्र के अतिचारों के चिन्तन की नहीं। श्रमण-सूत्र के अनेक पाठ यथा–एकविध असंयम, त्रिविध दण्ड, चतुष्काल-स्वाध्याय, पाँच महाव्रत (तीन करण-तीन योग से पाप-त्याग), पाँच समिति, षड्जीवनिकाय-रक्षा, नवविध-ब्रह्मचर्य-गुप्ति,

दशविध-श्रमण धर्म, द्वादश भिक्षु- प्रतिमा, बाईस परीषह, सत्ताइस अणगार-गुण आदि श्रावक के लिए आदर्श-रूप तो हैं, पर आचरण-दृष्ट्या कथमपि शक्य नहीं है। किसी विषय के प्रतिक्रमण करने की पूर्ण सार्थकता एवं फलवत्ता तभी है, जब पहले उसका विधिवत् ग्रहण किया जाए। उदाहरणार्थ श्रावक के नौवें एवं ग्यारहवें व्रत — सामायिक एवं पौषध में भी यही विधान है कि 'शुद्ध सामायिक एवं पौषध करने की मेरी श्रद्धा एवं प्ररूपणा है, स्पर्शना करने पर ही शुद्धि सम्भव है'। अर्थात् सामायिक व पौषध की फलवत्ता भी स्पर्शना होने में ही निहित है। अतः जब श्रावक-जीवन में साधुत्व की भूमिका अभी बन ही नहीं पाई, तो उसके पाठों का उच्चारण भी उचित प्रतीत नहीं होता।

दो प्रतिक्रमण—राजस्थान आदि की कुछ सम्प्रदायों में चौमासी एवं सम्वत्सरी-पर्व पर दैवसिक के साथ चातुर्मासिक एवं सांवत्सरिक, ये दो प्रतिक्रमण करने की परम्परा है। सम्वत् 1990 से पूर्व उत्तरभारत मे भी दो प्रतिक्रमण करने की परम्परा थी, किन्तु सम्वत् 1990 के बृहत् अजमेर-मुनि-सम्मेलन के पश्चात् भारतवर्ष में प्रायः सब सम्प्रदायों में एक ही प्रतिक्रमण करने की परम्परा डली। अतः व्यापक एकरूपता के दृष्टिगत श्रावक-श्राविकाओं को चातुर्मासी व संवत्सरी-पर्व पर एक ही प्रतिक्रमण करना चाहिए।

अव्रती के लिए प्रतिक्रमण—कई जिज्ञासु प्रश्न करते हैं कि जिस श्रावक-श्राविका ने श्रावक के व्रत नहीं लिए, क्या उसके लिए भी प्रतिक्रमण करना उचित है? इसका समाधान यही है कि व्रती श्रावकों का प्रतिक्रमण तो मणि-कांचन-संयोगवत् अतिउत्तम है ही, अव्रतियों को भी प्रतिक्रमण करना महान् लाभप्रद है। अन्तःकरण की लगनपूर्वक प्रतिक्रमण करने से कर्म-निर्जरा तो होती ही है, निकट भविष्य में व्रत-ग्रहण करने का संकल्प भी जागृत होता है।

प्रस्तुत संस्करण—भारतवर्ष के स्थानकवासी समाज की प्रायः सभी परम्पराओं में अपने-अपने ढंग से श्रावक-प्रतिक्रमण प्रकाशित हुए हैं।

प्रस्तुत संस्करण में अनेक प्रतिक्रमणों का गहन अध्ययन करके प्रतिक्रमण को सरल, सुगम और सर्वग्राही बनाने का प्रयास किया गया है। इसकी कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. सभी आवश्यकों की विधि साथ ही दी गई है। रेखाचित्रों द्वारा विभिन्न मुद्राओं को प्रदर्शित किया गया है।

2. राजस्थानी, गुजराती आदि प्रादेशिक भाषाओं के कठिन शब्दों का हिन्दी भाषा में रूपान्तरण किया गया है। बारह व्रतों का स्वरूप एवं व्रत-ग्रहण करने की विधि को भी स्पष्ट भाषा में समझाया गया है।

3. प्रत्येक पृष्ठ के ऊर्ध्व भाग में स्मरणीय पाठ एवं विधि दी गई है। स्मरणीय पाठ लाल स्याही में मुद्रित किए गए हैं, ताकि बार-बार न बताना पड़े कि कौन-कौन-सा पाठ स्मरण करना है।

4. प्राकृत-पाठों के अर्थ एवं अन्य टिप्पणियाँ सम्बन्धित पृष्ठ पर ही नीचे दी गई हैं।

5. पाठों के जो विशिष्ट शब्द 'काल' एवं 'आवश्यक' के अनुसार परिवर्तित होते हैं, उनको रेखांकित किया गया है।

किसी भी पुनीत कार्य के अन्तिम निर्णायक सुधी पाठक ही होते हैं, इसलिए प्रस्तुत संस्करण की उपयोगिता का निर्णय एकमात्र उन्हीं पर छोड़ते हुए, हम उनसे भविष्य में त्रुटि-सुधार के लिए अमूल्य सुझावों को आमन्त्रित कर रहे हैं।

पूज्य गुरुदेव संघ-शास्ता, शासन-प्रभावक महामहिम श्री श्री 1008 श्री सुदर्शन लाल जी म०सा० जीवन-भर समाज में सम्यग् ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र का आलोक भरते रहे। उन्होनें श्रावक-वर्ग में सामायिक, संवर एवं प्रतिक्रमण के संस्कार भरने का महान् प्रयास किया, एतदर्थ हम उन गुरुदेवों के ऋणी हैं। वर्तमान में उनका शिष्य-समुदाय इस भगीरथ-प्रयास को आगे बढा रहा है। उनके पुनीत निर्देशन में धार्मिक-समाज में घर-घर में प्रतिक्रमण करने की भावना जगे, हम यही मंगल-कामना करते हैं ।

श्रावक-प्रतिक्रमण-सूत्र

सर्वप्रथम शान्त, एकान्त एवं निरवद्य (हिंसा आदि 18 पाप से रहित) स्थान में जाकर सामायिक[1] धारण करें और प्रतिक्रमण प्रारम्भ करें।

---

1. सामायिक-सूत्रः करेमि भंते! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव नियम मुहूर्त (1, 2.....घड़ी 2, 4.....+ उपरान्त काल का संवर) पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा वयसा कायसा, तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

शब्दार्थः करेमि=करता हूँ **भंते**=हे भगवन्! (आपकी साक्षी से मैं) **सामाइयं**=सामायिक (कैसी सामायिक?) **सावज्जं**=पाप-सहित **जोगं**=व्यापारों को **पच्चक्खामि**=त्यागता हूँ (कब तक के लिए?) **जाव**=जब तक **नियम**= नियम की **पज्जुवासामि**=उपासना करूँ। (किस रूप से सावद्य का त्याग?) **दुविहं**=दो करण से **तिविहेणं**=तीन योग से **न करेमि**=न स्वयं पापकर्म करूँगा **न कारवेमि**=न दूसरों से करवाऊँगा **मणसा**=मन से **वयसा**=वचन से **कायसा**= काया से **तस्स**=अतीत में जो भी पाप कर्म किया हो, उसका **भंते**=हे भगवन्! **पडिक्कमामि**=प्रतिक्रमण करता हूँ **निंदामि**=आत्मसाक्षी से निंदा करता हूँ **गरिहामि**=आपकी साक्षी से गर्हा करता हूँ **अप्पाणं**=अपनी आत्मा को **वोसिरामि**=उस पाप से अलग करता हूँ।

यदि सामायिक सम्भव न हो, तो संवर[1] ग्रहण करके प्रतिक्रमण करें। अपने आसन से नीचे उतर कर भूमि की प्रमार्जना करें। यदि साधु/साध्वी जी विराजमान हों, तो उनको, अन्यथा पूर्व या उत्तर दिशा में मुख करके प्रथम विहरमाण श्री सीमंधर स्वामी जी को, गुरु-वन्दन-सूत्र से तीन बार पंचांग वन्दना करें और क्षेत्र-विशुद्धि के लिए 'चउवीसत्थव[2]' की आज्ञा लें।

---

1. संवर-सूत्रः द्रव्य से पाँच आस्रव-सेवन* का पच्चक्खाण, क्षेत्र से स्थानक (या घर)-परिमाण, काल से यथा-समय, भाव से उपयोग-सहित, गुण से कर्म-निर्जरा के कारण तथा जब तक पाँच नमोकार-मंत्र न पढ़ लूँ, तब तक, दुविहं तिविहेणं न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, तस्स भंते! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि!

***पाँच आस्रवः** मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और अशुभ योग।

2. चउवीसत्थवः चतुर्विंशति-स्तव अर्थात् 24 तीर्थंकर भगवानों की स्तुति का पाठ। वैसे तो 'लोगस्स' का पाठ ही 'चउवीसत्थव' है, किन्तु उपचार (व्यवहार) से इन सभी पाठों (नमस्कार-सूत्र से प्रणिपात-सूत्र तक) को ही 'चउवीसत्थव' कहते हैं।

गुरु-वन्दन-सूत्र

तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेमि वंदामि नमंसामि सक्कारेमि सम्माणेमि कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासामि मत्थएण वंदामि।

* * *

-अहो भंते! मुझे 'चउवीसत्थव' की आज्ञा प्रदान करें।

शब्दार्थ: तिक्खुत्तो=तीन बार **आयाहिणं**=दाहिनी ओर से **पयाहिणं**= प्रदक्षिणा **करेमि**=करता हूँ **वंदामि**=स्तुति करता हूँ **नमंसामि**= नमस्कार करता हूँ **सक्कारेमि**=सत्कार करता हूँ **सम्माणेमि**=सम्मान करता हूँ **कल्लाणं**=(आप) कल्याण रूप हो **मंगलं**=मंगल-रूप हो **देवयं**=धर्म-देव हो **चेइयं**=ज्ञान-स्वरूप हो **पज्जुवासामि**=(मैं आपकी)उपासना करता हूँ **मत्थएण**=मस्तक झुकाकर **वंदामि**=वंदना करता हूँ।

(फिर खड़े होकर)

नमस्कार-सूत्र

नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं,
नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं,
नमो लोए सव्वसाहूणं ।
एसो पंच नमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥

शब्दार्थ: **नमो**=नमस्कार हो **अरिहंताणं**=अरिहन्तों को **नमो**=नमस्कार हो **सिद्धाणं**=सिद्धों को **नमो**=नमस्कार हो **आयरियाणं**=आचार्यों को **नमो**=नमस्कार हो **उवज्झायाणं**=उपाध्यायों को **नमो**=नमस्कार हो **लोए**=लोक में **सव्व**=सब **साहूणं**=साधुओं को। **एसो**=यह **पंच**=पाँचों को किया हुआ **नमोक्कारो**=नमस्कार **सव्वपाव**=सब पापों का **प्पणासणो**=नाश करने वाला है **मंगलाणं**=मंगलों में **च**=और **सव्वेसिं**=सब **पढमं**=मुख्य **हवइ**=है **मंगलं**=मंगल।

(सम्यक्त्व-सूत्र)

अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो ।
जिण-पण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ॥1॥
पंचिंदिय-संवरणो, तह नवविह-बंभचेर-गुत्तिधरो ।
चउविह-कसाय-मुक्को, इअ अट्ठारस-गुणेहिं संजुत्तो ॥2॥
पंच-महव्वय-जुत्तो, पंच-विहायार-पालण-समत्थो ।
पंच-समिओ तिगुत्तो, छत्तीस-गुणो गुरू मज्झं ॥3॥

शब्दार्थः **अरिहंतो**=अरिहंत भगवान् **मह**=मेरे **देवो**=देव हैं **जावज्जीवं**=जीवन-पर्यन्त **सुसाहुणो**=श्रेष्ठ साधु **गुरुणो**=गुरु हैं **जिण-पण्णत्तं**=वीतराग देव का प्ररूपित तत्त्व ही **तत्तं**=तत्त्व है, धर्म है **इअ**=यह **सम्मत्तं**=सम्यक्त्व **मए**=मैंने **गहियं**=ग्रहण किया है। **पंचिंदिय-संवरणो**=पाँच इन्द्रियों के विषयों को वश में करने वाले **तह**=तथा इसी प्रकार **नवविह-बंभचेर-गुत्ति-धरो**=नौ प्रकार की ब्रह्मचर्य की गुप्तियों को धारण करने वाले **चउ-विह-कसाय-मुक्को**=चार प्रकार के कषायों से मुक्त **इअ**=इन **अट्ठारस-गुणेहिं संजुत्तो**=अठारह गुणों से संयुक्त। **पंच-महव्वय-जुत्तो**=पाँच महाव्रतों से युक्त **पंच-विहायार-पालण-समत्थो**=पाँच प्रकार का आचार पालने में समर्थ **पंच-समिओ**=पाँच समिति वाले **तिगुत्तो**-तीन गुप्ति वाले **छत्तीस-गुणो**=छत्तीस गुणों वाले **गुरू**=गुरु हैं **मज्झं**=मेरे।

(आलोचना-सूत्र)

इच्छाकारेण संदिसह भगवं! इरियावहियं पडिक्कमामि, इच्छं। इच्छामि पडिक्कमिउं इरियावहियाए विराहणाए—गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे, ओसा-उत्तिंग-पणग-दग-मट्टी-मक्कडा-संताणा-संकमणे जे मे जीवा विराहिया एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया। अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया, तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ: इच्छाकारेण=इच्छापूर्वक **संदिसह**=आज्ञा दीजिए **भगवं**=हे भगवन् **इरियावहियं**=ऐर्यापथिक क्रिया का **पडिक्कमामि**=प्रतिक्रमण करूँ (गुरुदेव के आज्ञा देने पर) **इच्छं**=आज्ञा प्रमाण है **इच्छामि**=चाहता हूँ **पडिक्कमिउं**=निवृत्त होने को (किससे?) **इरियावहियाए**=ईर्यापथसम्बन्धी **विराहणाए**=विराधना से (विराधना किन जीवों की, और किस तरह?) **गमणागमणे**=जाने-आने में **पाणक्कमणे**=किसी प्राणी को दबाने से **बीयक्कमणे**=बीज को दबाने से **हरियक्कमणे**=वनस्पति को दबाने से **ओसा**=ओस को **उत्तिंग**=कीड़ी आदि के बिल को **पणग**=पाँच वर्ण की काई को **दग**=जल को **मट्टी**=मिट्टी को **मक्कडा-संताणा**=मकड़ी के जालों को **संकमणे**=कुचलने से **जे**=जो **मे**=मैंने **जीवा**=जीव **विराहिया**=पीड़ित किए हों (कौन से जीव?) **एगिंदिया**=एक इन्द्रिय वाले **बेइंदिया**=दो इन्द्रिय वाले **तेइंदिया**=तीन इन्द्रिय वाले **चउरिंदिया**=चार इन्द्रिय वाले **पंचिंदिया**=पाँच इन्द्रिय

(कायोत्सर्ग-प्रतिज्ञा-सूत्र)

तस्स उत्तरी-करणेणं, पायच्छित्त-करणेणं विसोहि-करणेणं, विसल्ली-करणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए ठामि काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वाय-निसग्गेणं, भमलीए, पित्त-मुच्छाए, सुहुमेहिं अंग-संचालेहिं, सुहुमेहिं खेल-संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठि-संचालेहिं एवमाइएहिं

वाले (किस तरह पीड़ित किए हों?) **अभिहया**=सामने से आते रोके हों **वत्तिया**=धूल आदि से ढके हों **लेसिया**=परस्पर मसले हों **संघाइया**=इकट्ठे किए हों **संघटिट्या**=छुए हों **परियाविया**=परितापना दी हो **किलामिया**=थकाए हों **उद्दविया**=हैरान किए हों **ठाणाओ**=एक स्थान से **ठाणं**=दूसरे स्थान पर **संकामिया**=रक्खे हों **जीवियाओ**=जीवन से **ववरोविया**=रहित किए हों **तस्स**=उसका **मिच्छा**=निष्फल हो **मि**=मेरे लिए **दुक्कडं**=पाप।

शब्दार्थ: तस्स=उस दूषित आत्मा की **उत्तरी-करणेणं**=उत्कृष्टता के लिए **पायच्छित्त-करणेणं**=प्रायश्चित्त करने के लिए **विसोहि-करणेणं**=विशुद्धि करने के लिए **विसल्ली-करणेणं**=शल्य का त्याग करने के लिए **पावाणं**=पाप **कम्माणं**=कर्मों का **निग्घायणट्ठाए**=नाश करने के लिए **ठामि**=करता हूँ **काउस्सग्गं**=कायोत्सर्ग **अन्नत्थ**=आगे कहे जाने वाले आगारों के सिवा शेष **काय**=व्यापारों का त्याग करता हूँ **ऊससिएणं**=उच्छ्वास से

आगारेहिं अभग्गो अविराहिओ हुज्ज मे काउस्सग्गो, जाव अरिहंताणं भगवंताणं नमोक्कारेणं न पारेमि, ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं अप्पाणं वोसिरामि ॥

('अप्पाणं' बोलते ही ध्यान प्रारम्भ करें। ध्यान में एक 'लोगस्स' का चिंतन करें।)

नीससिएणं=निःश्वास से **खासिएणं**=खाँसी से **छीएणं**=छींक से **जंभाइएणं**= जँभाई-उबासी से **उड्डुएणं**=डकार से **वायनिसग्गेणं**=अपान-वायु से **भमलीए**= चक्कर आने से **पित्त-मुच्छाए**=पित्त-विकार की मूर्छा से **सुहुमेहिं**=सूक्ष्म **अंग-संचालेहिं**=अंग के संचार से **सुहुमेहिं**=सूक्ष्म **खेल-संचालेहिं**=कफ के संचार से **सुहुमेहिं**=सूक्ष्म **दिट्ठि-संचालेहिं**=दृष्टि के संचार से **एवमाइएहिं**= इत्यादि **आगारेहिं**=आगारों-अपवादों से **अभग्गो**=अभग्न **अविराहिओ**= विराधना-रहित **हुज्ज**=हो **मे**=मेरा **काउस्सग्गो**=कायोत्सर्ग (कायोत्सर्ग कब तक?) **जाव**=जब तक **अरिहंताणं**=अरिहन्त **भगवंताणं**=भगवान् को **नमोक्कारेणं**=नमस्कार करके **न पारेमि**=कायोत्सर्ग को न पारूँ **ताव**=तब तक **कायं**=शरीर को **ठाणेणं**=एक स्थान पर स्थिर रख कर **मोणेणं**=मौन रहकर **झाणेणं**=ध्यानस्थ रह कर **अप्पाणं**=अपने को **वोसिरामि**=(पाप कर्मों से) अलग करता हूँ।

(चतुर्विंशति-स्तव-सूत्र)

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म-तित्थयरे जिणे ।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ॥1॥
उसभमजियं च वंदे, संभव मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥2॥
सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल-सिज्जंस-वासुपुज्जं च ।
विमल मणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥3॥
कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च ।
वंदामि रिट्ठणेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥4॥
एवं मए अभित्थुआ, विहूय-रय-मला, पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ॥5॥
कित्तिय-वंदिय-महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ।
आरुग्ग-बोहि-लाभं, समाहि वर मुत्तमं दिंतु ॥6॥

शब्दार्थ : **लोगस्स**=सम्पूर्ण लोक के **उज्जोयगरे**=उद्योत करने वाले **धम्म-तित्थयरे**=धर्मतीर्थ के कर्त्ता **जिणे**=राग-द्वेष के विजेता **अरिहंते**=अरिहन्तों का **कित्तइस्सं**=कीर्तन करूँगा **चउवीसंपि**=चौबीस ही **केवली**=केवल-ज्ञानियों का

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा ।
सागर-वर-गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥7॥

❋ ❋ ❋

-नमो अरिहंताणं। (ध्यान खोलें)

(कायोत्सर्ग-शुद्धि/ध्यान-शुद्धि सूत्र)

ध्यान में आर्तध्यान व रौद्रध्यान ध्याया हो, धर्मध्यान न ध्याया हो, तथा मन, वचन, काया के योग चलित हुए हों, तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

उसभं=ऋषभदेव **च**=और **अजियं**=अजित को **वंदे**=वन्दन करता हूँ **संभवं**=संभव **च**=और **अभिणंदणं**=अभिनन्दन **च**=और **सुमइं**=सुमति को **पउमप्पहं**=पद्म-प्रभ **सुपासं**=सुपार्श्व **जिणं**=जिन को **च**=और **चंदप्पहं**= चन्द्र-प्रभ को **वंदे**=वन्दना करता हूँ **सुविहिं**=सुविधि **पुप्फदंतं**=पुष्प-दन्त **च**=और **सीअल**=शीतल **सिज्जंस**=श्रेयांस **च**=और **वासुपुज्जं**=वासुपूज्य **विमलं**=विमल **च**=और **अणंतं**=अनंत **जिणं**=जिन को **धम्मं**=धर्मनाथ **च**=और **संतिं**=शान्तिनाथ को **वंदामि**=वन्दना करता हूँ **कुंथुं**=कुन्थुनाथ **अरं**=अरनाथ **च**=और **मल्लिं**=मल्लि जिन को **वंदे**=वन्दना करता हूँ **मुणिसुव्वयं**=मुनिसुव्रत **च**=और **नमिजिणं**=नमिनाथ को **वंदामि**=वन्दना करता हूँ **रिट्ठणेमिं**=अरिष्टनेमि **पासं**=पार्श्वनाथ **तह**=तथा **वद्धमाणं च**=वर्द्धमान को भी **एवं**=इस प्रकार **मए**=मेरे द्वारा **अभित्थुआ**=स्तुति किए गए **विहूय-रयमला**=पाप-मल से रहित **पहीणजरमरणा**=जन्म और मृत्यु से मुक्त **चउवीसं पि**=चौबीसों ही **जिणवरा**= जिनवर **तित्थयरा**=तीर्थंकर **मे**=मुझ पर **पसीयंतु**=प्रसन्न हों **कित्तिय**=स्तुत **वंदिय**=वन्दित **महिया**=पूजित **जे**=जो **ए**=ये **लोगस्स**=लोक में **उत्तमा**=उत्तम **सिद्धा**=तीर्थंकर हैं, वे **आरुग्ग**=आरोग्य (आत्मशक्ति) **बोहि-लाभं**= धर्म-प्राप्ति का लाभ **समाहिवरं**=प्रधान-समाधि **उत्तमं**=श्रेष्ठ **दिंतु**=मुझे देवें **चंदेसु**=चन्द्रों से भी **निम्मलयरा**=विशेष निर्मल **आइच्चेसु**=सूर्यों से भी **अहियं**=अधिक **पयासयरा**=प्रकाश करने वाले **सागर-वर-गम्भीरा**=समुद्र के समान गम्भीर **सिद्धा**=24 तीर्थंकर **मम**=मुझे **सिद्धिं**=सिद्धि-गति **दिसंतु**=प्रदान करें।

(फिर एक 'लोगस्स'-प्रकट में बोलें।)

लोगस्स उज्जोयगरे .....मम दिसंतु ।

(फिर नीचे बैठकर, बायाँ घुटना ऊपर करके, दायाँ घुटना नीचा करके, दो बार 'प्रणिपात-सूत्र' पढें)

(प्रणिपात-सूत्र या शक्रस्तव-सूत्र)

नमोत्थुणं! अरिहंताणं भगवंताणं आइगराणं तित्थयराणं सयं-संबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं पुरिस-सीहाणं पुरिस-वर-पुंडरीयाणं पुरिस-वर-गंधहत्थीणं लोगुत्तमाणं लोग-नाहाणं लोग-हियाणं लोग-पईवाणं लोग-पज्जोयगराणं अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं धम्म-देसयाणं धम्म-नायगाणं धम्म-सारहीणं धम्म-वर-चाउरंत-चक्कवट्टीणं दीव-ताण-सरण-गइ-पइट्ठाणं अप्पडिहय-वर-नाण-दंसण-धराणं वियट्ट-

छउमाणं जिणाणं जावयाणं तिण्णाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोयगाणं सव्वन्नूणं सव्व-दरिसीणं सिव मयल मरुय मणंत मक्खय मव्वाबाह मपुणरावित्ति-सिद्धि गइ-नामधेयं 'ठाणं संपत्ताणं' नमो जिणाणं जियभयाणं।

(द्वितीय बार मे 'ठाणं संपत्ताणं' के स्थान पर 'ठाणं संपाविउ कामाणं' बोलें।)

शब्दार्थः नमोत्थुणं=नमस्कार हो **अरिहंताणं**=अरिहन्त **भगवंताणं**=भगवान् को (भगवान् कैसे हैं?) **आइगराणं**=धर्म की आदि करने वाले **तित्थयराणं**=धर्मतीर्थ की स्थापना करने वाले **सयं**=स्वयं ही **संबुद्धाणं**=सम्यग्बोध को पाने वाले **पुरिसुत्तमाणं**=पुरुषों में श्रेष्ठ **पुरिससीहाणं**=पुरुषों में सिंह **पुरिसवरपुंडरीयाणं**= पुरुषों में श्रेष्ठ कमल **पुरिसवरगंधहत्थीणं**=पुरुषों में श्रेष्ठ गन्धहस्ती **लोगुत्तमाणं**=लोक में उत्तम **लोगनाहाणं**=लोक के नाथ **लोगहियाणं**=लोक के हितकारी **लोगपईवाणं**=लोक के दीपक **लोग-पज्जोयगराणं**=लोक में ज्ञान का उद्योत करने वाले **अभयदयाणं**=अभय देने वाले **चक्खुदयाणं**=ज्ञान के नेत्र देने वाले **मग्गदयाणं**=धर्म-मार्ग के दाता **सरणदयाणं**=शरण के दाता **जीवदयाणं**= जीवन के दाता **बोहिदयाणं**=बोधि अर्थात् सम्यक्त्व देने वाले **धम्मदयाणं**=धर्म के दाता **धम्मदेसयाणं**=धर्म के उपदेशक **धम्मनायगाणं**=धर्म के नायक **धम्मसारहीणं**=धर्म के सारथी **धम्मवर**=धर्म के श्रेष्ठ **चाउरंत**=चार गति का अन्त करने वाले **चक्कवट्टीणं**=चक्रवर्ती **दीव-ताण**=संसार-रूपी समुद्र में द्वीप-समान त्राणभूत **सरण-गइ-पइट्ठाणं**=शरणभूत-आश्रयभूत-आधारभूत **अप्पडिहय**=अप्रतिहत (बाधा-रहित) **वर-नाण-दंसण**=श्रेष्ठ ज्ञान तथा दर्शन के **धराणं**=धारण करने वाले **विअट्ट-छउमाणं**=छद्म-भाव से रहित **जिणाणं**= रागद्वेष के विजेता **जावयाणं**=औरों को जिताने वाले **तिण्णाणं**=स्वयं तरे हुए **तारयाणं**=दूसरों को तारने वाले **बुद्धाणं**=स्वयं बोध को प्राप्त **बोहयाणं**=दूसरों को

(फिर वन्दना करके प्रतिक्रमण की आज्ञा लें।)

तिक्खुत्तो..... (तीन बार)

–अहो भंते! मुझे प्रतिक्रमण की आज्ञा प्रदान करें।

(खड़े होकर)

(प्रतिक्रमण-प्रतिज्ञा-सूत्र)

इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे देवसियं[1] पडिक्कमणं ठाएमि। देवसिय[2]-नाण-दंसण-चरित्ताचरित्त-तव-अइयार-चिंतणत्थं करेमि काउसग्गं।

---

1. जहाँ जहाँ 'देवसियं' शब्द आवे वहाँ-वहाँ देवसियं के स्थान पर रात्रिक-प्रतिक्रमण में 'राइयं', पाक्षिक में 'देवसियं पक्खियं', चातुर्मासिक में 'देवसियं चाउम्मासियं' और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में 'देवसियं संवच्छरियं' शब्द बोलना चाहिए।
2. जहाँ जहाँ 'देवसिय' शब्द आवे वहाँ-वहाँ 'देवसिय' के स्थान पर में 'राइय', पाक्षिक में 'देवसिय पक्खिय', चातुर्मासिक में 'देवसिय चाउम्मसिय', और सांवत्सरिक में 'देवसिय संवच्छरिय' शब्द बोलना चाहिए।

बोध देने वाले **मुत्ताणं**=स्वयं मुक्त **मोयगाणं**=दूसरों को मुक्त करने वाले **सव्वन्नूणं**=सर्वज्ञ **सव्वदरिसीणं**=सर्वदर्शी, तथा **सिवं**=उपद्रव-रहित **अयलं**=अचल, स्थिर **अरुयं**=रोगरहित **अणंतं**=अन्तरहित **अक्खयं**=अक्षय **अव्वाबाहं**=बाधारहित **अपुणरावित्ति**=पुनरागमन से रहित **सिद्धिगइ**=सिद्धि-गति **नामधेयं ठाणं**=नामक स्थान को **संपत्ताणं**=प्राप्त किए हुए (**संपाविउ कामाणं**=प्राप्त करने की कामना करने वाले) **नमो**=नमस्कार हो **जिणाणं**=जिन भगवान् को **जियभयाणं**=भय के जीतने वाले।

शब्दार्थः **इच्छामि णं**=मैं चाहता हूँ **भंते**=हे भगवन्! **तुब्भेहिं**=आपके द्वारा

(नमस्कार-सूत्र)

नमो अरिहंताणं.....हवइ मंगलं।

प्रथम आवश्यक : सामायिक

(सामायिक-प्रतिज्ञा-सूत्र)

करेमि भंते ! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव-नियमं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं — न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, तस्स भंते ! पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

(सर्व-अतिचार-शुद्धि-सूत्र)

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं।[1] जो मे देवसिओ[2] अइयारो कओ काइओ वाइओ माणसिओ उस्सुत्तो उम्मग्गो अकप्पो अकरणिज्जो दुज्झाओ दुव्विचिंतिओ अणायारो अणिच्छियव्वो असावग-पाउग्गो नाणे तह दंसणे,

---

1. 'इच्छामि ठामि काउस्सग्गं' के स्थान पर चतुर्थ आवश्यक (पृष्ठ 30) में 'इच्छामि आलोइउं' और श्रावक-सूत्र (पृष्ठ 33) में 'इच्छामि पडिक्कमिउं' बोलना है।
2. जहाँ जहाँ भी 'देवसिओ' शब्द आवे, उसके स्थान पर रात्रिक-प्रतिक्रमण

अब्भणुण्णाए समाणे=आज्ञा प्राप्त करने पर **देवसियं**=दिन-सम्बन्धी **पडिक्कमणं**=प्रतिक्रमण **ठाएमि**=करना **देवसिय**=दिन-सम्बन्धी **नाण-दंसण**=ज्ञान, दर्शन **चरित्ताचरित्त**=चारित्राचारित्र (श्रावक का देश-चारित्र) **तव**=और तप, इन चारों के **अइयार**=99 अतिचारों (व्रत के दोष) का **चिंतणत्थं**=चिन्तन करने के लिए **करेमि**=करता हूँ **काउस्सग्गं**=कायोत्सर्ग को ।

चरित्ताचरित्ते, सुए, सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं, पंचण्हं अणुव्वयाणं, तिण्हं गुण-वयाणं, चउण्हं सिक्खा-वयाणं, बारस-विहस्स सावग-धम्मस्स जं खंडियं, जं विराहियं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

में 'राइओ', पाक्षिक-प्रतिक्रमण में 'देवसियो पक्खिओ', चौमासी-प्रतिक्रमण में 'देवसियो चाउम्मासिओ' और संवत्सरी-प्रतिक्रमण में 'देवसियो संवच्छरिओ' शब्द बोलना चाहिये। इसी क्रम में 'देवसियाए' के स्थान पर क्रमशः 'राइयाए', देवसियाए पक्खियाए', देवसियाए चाउम्मासियाए' तथा देवसियाए संवच्छरियाए' बोलना चाहिए, तथा 'दिवस' के स्थान पर क्रमशः 'रात्रि', 'पक्खी', 'चातुर्मासी' एवं 'संवत्सरी' बोलना चाहिए।

शब्दार्थः इच्छामि=मैं चाहता हूँ **ठामि**=करना **काउस्सग्गं**=कायोत्सर्ग **जो मे**=(निम्न अतिचारों में से) मैंने जो कोई **देवसिओ**=दिवस-सम्बन्धी **अइयारो**=अतिचार **कओ**=किया हो **काइओ**=काया-सम्बन्धी **वाइओ**=वचन-सम्बन्धी **माणसिओ**=मन-सम्बन्धी **उस्सुत्तो**=वचन से उत्सूत्र (सूत्र-विरुद्ध) कहा हो **उम्मग्गो**=उन्मार्ग (जिन-मार्ग से विरुद्ध) कहा हो **अकप्पो**=काया से अकल्पनीय कार्य किया हो **अकरणिज्जो**=अकरणीय (नहीं करने योग्य) किया हो **दुज्झाओ**=(मन से) आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान ध्याया हो **दुव्विचिंतिओ**=दुष्ट चिन्तन किया हो **अणायारो**=न आचरने योग्य का आचरण किया हो **अणिच्छियव्वो**=(मन से) अनिच्छनीय की इच्छा की हो **असावग-पाउग्गो**=श्रावक-धर्म के विरुद्ध काम किया हो **णाणे तह दंसणे**=ज्ञान तथा दर्शन में **चरित्ताचरित्ते**=चारित्राचरित्र (श्रावक-व्रत) में **सुए**=श्रुत (ज्ञान) में **सामाइए**=सामायिक में **तिण्हं गुत्तीणं**=तीन गुप्तियों की **चउण्हं कसायाणं**=चार कषायों के निषेधों की **पंचण्हं अणुव्वयाणं**=पाँच अणुव्रतों की **तिण्हं गुणवयाणं**=तीन गुणव्रतों की **चउण्हं सिक्खावयाणं**=चार शिक्षा-व्रतों की (इस प्रकार) **बारस-विहस्स**=बारह प्रकार के **सावग-धम्मस्स**=श्रावक-धर्म की **जं खंडियं**=जो देश से खण्डना की हो **जं विराहियं**=जो सर्वथा विराधना की हो **तस्स मिच्छामि दुक्कडं**=उसका मेरा पाप निष्फल हो।

(कायोत्सर्ग-प्रतिज्ञा-सूत्र)

तस्स उत्तरीकरणेणं.....अप्पाणं वोसिरामि (पृष्ठ 7)

('अप्पाणं' बोलते ही ध्यान प्रारम्भ करें)

(ध्यान-मुद्रा=खड़े होकर या बैठकर)

(ज्ञान-अतिचार-सूत्र)

आगमे तिविहे पण्णत्ते, तंजहा-सुत्तागमे, अत्थागमे, तदुभयागमे। इन तीन प्रकार के आगम-रूप ज्ञान के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं-जं वाइद्धं, वच्चामेलियं, हीणक्खरं, अच्चक्खरं, पय-हीणं, विणय-हीणं, जोग-हीणं, घोस-हीणं, सुट्ठु दिण्णं, दुट्ठु पडिच्छियं, अकाले कओ सज्झाओ, काले न कओ सज्झाओ, असज्झाए सज्झाइयं, सज्झाए न सज्झाइयं,

भणते, गुणते, विचारते समय ज्ञान और ज्ञानवंत पुरुषों की अविनय-आशातना की हो तो तस्स आलोउं[1] (तस्स मिच्छामि दुक्कडं) ।

---

1. चतुर्थ आवश्यक (पृष्ठ 29-30) में हर जगह 'तस्स आलोउं' के स्थान पर 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं' बोलना है।

शब्दार्थ : आगमे=आगम **तिविहे पण्णत्ते**=तीन प्रकार का कहा हैं **तंजहा**= वह इस प्रकार है **सुत्तागमे**=सूत्र-रूप आगम **अत्थागमे**=अर्थ-रूप आगम **तदुभयागमे**=सूत्र-अर्थ-उभय-रूप आगम **जं**=जो यदि **वाइद्धं**=पाठ आगे पीछे बोला हो **वच्चामेलियं**=अन्य सूत्र का पाठ अन्य सूत्र में मिलाया हो **हीणक्खरं** =अक्षर छोड़ दिये हों **अच्चक्खरं**=अक्षर बढ़ा दिये हों **पयहीणं**=पद छोड़ दिये हों **विणयहीणं**=विनय-रहित पढ़ा हो **जोग-हीणं**=मन, वचन, काया की स्थिरता न रखकर पढ़ा हो **घोसहीणं**=शुद्ध उच्चारण किये बिना पाठ बोले हों **सुट्ठु दिण्णं**=शिष्य में शास्त्र ग्रहण करने की जितनी शक्ति हो, उससे अधिक पढ़ाया हो **दुट्ठुपडिच्छियं**=दुष्ट-भाव से ग्रहण किया हो **अकाले कओ सज्झाओ** =अकाल में स्वाध्याय किया हो **काले न कओ सज्झाओ**=काल में स्वाध्याय न किया हो **असज्झाए सज्झाइयं**=अस्वाध्याय में स्वाध्याय किया हो या स्वाध्याय के अयोग्य विषयों का अध्ययन किया हो **सज्झाए न सज्झाइयं** =स्वाध्याय में स्वाध्याय न किया हो या स्वाध्याय के योग्य विषयों का अध्ययन न किया हो **भणते**=वाचना, पृच्छना और धर्म-कथा करते हुए **गुणते**=परिवर्तना करते (फेरते) हुए **विचारते**=अनुप्रेक्षा (चिन्तन) करते हुए।

(दर्शन-सम्यक्त्व-सूत्र)

अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवाए सुसाहुणो गुरुणो।
जिण-पण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मत्तं मए गहियं ॥
परमत्थ-संथवो वा, सुदिट्ठ-परमत्थ-सेवणा वावि ।
वावण्ण-कुदंसण-वज्जणा य सम्मत्त-सद्दहणा ॥

इस प्रकार श्री सम्यक्त्व-रत्न-पदार्थ के विषय में जो कोई अतिचार लगा हो, तो आलोउं-(1) वीतराग के वचन में शंका की हो, (2) पर-दर्शन की आकांक्षा की हो, (3) धर्म के फल में संदेह किया हो, (4) पर-पाखंडी की प्रशंसा की हो, (5) पर-पाखंडी का परिचय किया हो, एवं मेरे सम्यक्त्व-रूप-रत्न पर मिथ्यात्व-रूपी रज-मैल लगा हो, तो तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं) ।

शब्दार्थ: अरिहंतो मह देवो=अरिहन्त मेरे देव हैं; **जावज्जीवाए**=जीवन-पर्यन्त; **सुसाहुणो गुरुणो**=श्रेष्ठ साधु गुरु हैं; **जिण-पण्णत्तं**=वीतराग देव द्वारा प्ररूपित; **तत्तं**=तत्त्व धर्म है; **इअ सम्मत्तं**=इस प्रकार का सम्यक्त्व; **मए गहियं**=मैंने ग्रहण किया है; **परमत्थ**=परमार्थ (नव तत्त्व) का; **संथवो वा**=संस्तव (ज्ञान) करना; **सुदिट्ठ-परमत्थ**=परमार्थ के अच्छे जानकारों की **सेवणा वावि**=सेवा (प्रशंसा व परिचय) करना **वावण्ण**=सम्यक्त्व-भ्रष्ट और **कुदंसण**=कुदर्शन (अन्यमती) की **वज्जणा य**=संगति न करना **सम्मत्त**=ये चार कार्य सम्यक्त्व के **सद्दहणा**=श्रद्धान हैं।

(बारह व्रतों के अतिचार)

(स्थूल-प्राणातिपात-विरमण-अणुव्रत-अतिचार-सूत्र)

पहला व्रत स्थूल-प्राणातिपात-विरमण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) रोषवश कठोर बन्धन बांधा हो, (2) गहरा घाव किया हो, (3) शरीर के किसी अवयव का छेद किया हो, (4) अधिक भार भरा हो, (5) आहार-पानी का विच्छेद किया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(स्थूल-मृषावाद-विरमण-अणुव्रत-अतिचार-सूत्र)

दूजा स्थूल-मृषावाद-विरमण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) सहसाकार से किसी के प्रति झूठा दोष लगाया हो, (2) एकान्त में गुप्त बातचीत करते हुए व्यक्तियों पर झूठा आरोप लगाया हो, (3) स्व-स्त्री (स्व-पति) के मर्म[1] प्रकाशित किए हों, (4) झूठा उपदेश दिया हो, (5) झूठा लेख लिखा हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

---

1. गुप्त रहस्य

(स्थूल-अदत्तादान-विरमण-अणुव्रत-अतिचार-सूत्र)

तीजा स्थूल-अदत्तादान-विरमण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) चोर की चुराई हुई वस्तु ली हो, (2) चोर को सहायता दी हो, (3) राज्य-विरुद्ध काम किया हो, (4) न्यून-अधिक तोल-माप किया हो, (5) वस्तु में मिलावट की हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(स्व-दार-सन्तोष-अणुव्रत-अतिचार-सूत्र)

चौथा स्थूल-स्व-दार-सन्तोष, पर-दार-विवर्जन-रूप (स्व पति-सन्तोष, पर-पति-विवर्जन-रूप)[1] मैथुन-विरमण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) इत्वर-परिगृहीता[2] से गमन किया हो, (2) अपरिगृहीता[3] से गमन किया हो, (3) अनंग-क्रीडा की हो, (4) पराए का विवाह-नाता कराया हो, (5) काम-भोग की तीव्र-अभिलाषा की हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

---

1. स्त्रियाँ रेखांकित शब्दों के स्थान पर कोष्ठक में लिखित शब्द पढ़ें।
2. अल्प आयु वाली स्वस्त्री।
3. सगाई की हुई स्वस्त्री।

(स्थूल-परिग्रह-परिमाण-अणुव्रत-अतिचार-सूत्र)

पांचवाँ स्थूल-परिग्रह-परिमाण व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो, तो आलोउं (1) खेत और भवन का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (2) चांदी-सोने का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (3) धन-धान्य का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (4) द्विपद-चतुष्पद का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (5) कुप्य-धातु[1] का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(दिशा-परिमाण-गुणव्रत-अतिचार-सूत्र)

छठा दिशा-परिमाण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो, तो आलोउं (1) ऊँची दिशा का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (2) नीची दिशा का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (3) तिरछी दिशा का परिमाण-अतिक्रमण किया हो, (4) क्षेत्र बढ़ाया हो, (5) क्षेत्र का परिमाण भूल जाने से, पथ का सन्देह पड़ने पर आगे चला हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

---

1. लोहा, पीतल, तांबा, कांस्य आदि धातु व इनसे बने बर्तन।

(उपभोग-परिभोग-परिमाण-गुणव्रत-अतिचार-सूत्र)

सातवाँ उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) पच्चक्खाण-उपरान्त सचित्त का आहार किया हो, (2) सचित्त-प्रतिबद्ध का आहार किया हो, (3) अपक्व का आहार किया हो, (4) दुष्पक्व का आहार किया हो, (5) तुच्छ-औषधि[1] का आहार किया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

पन्द्रह कर्मादान[2] जो श्रावक-श्राविका को जानने-योग्य हैं, किन्तु आचरण करने योग्य नहीं हैं, उनके विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) इंगाल-कम्मे (2) वण-कम्मे (3) साडी-कम्मे (4) भाडी-कम्मे (5) फोडी-कम्मे (6) दन्त-वाणिज्जे (7) लक्ख-वाणिज्जे (8) रस-वाणिज्जे (9) केस-वाणिज्जे (10) विस-वाणिज्जे (11) जंत-पीलण-कम्मे (12) निल्लंछण-कम्मे (13) दवग्गि-दावणया (14) सर-दह-तलाय-सोसणया (15) असई-जण-पोसणया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

---

1. जिन वनस्पतियों में खाने योग्य भाग कम और फैंकने योग्य भाग अधिक हो, यथा—गन्ना, मूंगफली, भुट्टा आदि अथवा जीव-जन्तु-कीड़े आदि उत्पन्न होने की अधिक सम्भावना हो, वे तुच्छ-औषधि हैं, यथा-गूलर, बड़, पीपल या मौसम गुजर जाने पर फल-सब्जियाँ।
2. जिन व्यापारों में त्रस-जीवों (विशेषतः पंचेन्द्रिय) की घोर हिंसा आदि पाप हों या तीव्र-अशुभ कर्म बंधें, वे कर्मादान हैं।

शब्दार्थः इंगाल-कम्मे (अंगार-कर्म)=जंगल जलाकर कोयला बनाना या ईंट-भट्टा आदि लगाना **वण-कम्मे (वन कर्म)**=वनों का ठेका लेकर वृक्ष, फल, फूल, पत्ते आदि काट कर आजीविका करना **साडी-कम्मे (शकट-कर्म)**=गाड़ी, तांगा, मोटर, ठेले आदि बनाना व बेचना **भाडी-कम्मे (भाटी-कर्म)**= गाड़ी, मोटर, तांगा, घोड़े आदि को भाड़े पर देना **फोडी-कम्मे (स्फोट-कर्म)**=जिसमें पृथ्वी काय व उसके आश्रित जीवों की महान् हिंसा हो, ऐसा काम–जैसे खान खोदना **दंतवाणिज्जे (दन्त-वाणिज्य)**=त्रसकायिक जीवों के अवयवों का व्यापार करना, जैसे–हाथी-दाँत, केश, चमड़ा, शंख आदि। **लक्खवाणिज्जे (लाक्षा-वाणिज्य)**=जिसमें त्रसकाय के जीवों की बहुत विराधना हो, जैसे लाख, चपड़ी, सुला हुआ धान्य आदि का व्यापार **रसवाणिज्जे (रस-वाणिज्य)**=मदिरा, तेल, गुड़, शक्कर, शहद आदि या रसवाले प्रवाही पदार्थ का व्यापार करना **केसवाणिज्जे (केश-वाणिज्य)**=चमड़ा, फर, शाहतूस, चँवर आदि का व्यापार **विसवाणिज्जे (विष-वाणिज्य)**=संखिया आदि विष, तलवार आदि शस्त्रास्त्र, टिड्डी-चूहे आदि मारने की दवा-पाउडर आदि का व्यापार **जंतपीलणकम्मे (यंत्रपीड़नकर्म)**=तिल, ईख, मूंगफली आदि को यंत्रों द्वारा पीलना, कपास से रूई निकालना,आटा मिल, चीनी मिल आदि भारी मशीनों से कार्य करना **निल्लंछणकम्मे (निर्लांछनकर्म)**=बैल, घोड़े, मनुष्य आदि को नपुंसक बनाना, उनके अंगोपांगों का छेदन आदि कार्य करना **दवग्गि-दावणया (दवाग्नि-दापनता)**=खेत, जंगल, भूमि के घास आदि कचरे को अग्नि जलाकर साफ करने के ठेके आदि का काम करना **सर-दह-तलाय- सोसणया (सरो-ह्रद-तडाग-शोषणता)**=जिसमें अप्काय तथा उसके आश्रित मछली आदि जलचर जीवों का महारंभ हो ऐसा काम,जैसे सरोवर, नहर, कूआँ, तालाब आदि जलाशयों का पानी निकालकर सुखाना आदि **असई-जण- पोसणया (असती-जन-पोषणता)**=वेश्यावृत्ति के लिए कन्या आदि का, शिकार के लिए कुत्ते आदि का पोषण करना।

(अनर्थ-दण्ड-विरमण-गुणव्रत-अतिचार-सूत्र)

आठवाँ अनर्थ-दंड-विरमण-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) काम-विकार पैदा करने वाली कथा की हो, (2) भाण्ड-कुचेष्टा की हो, (3) मुखरी वचन बोला हो, (4) अधिकरण यानी हिंसाकारी उपकरणों का संग्रह किया हो, (5) उपभोग-परिभोग अधिक बढ़ाया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(सामायिक-शिक्षाव्रत-अतिचार-सूत्र)

नवमाँ सामायिक व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) मन, (2) वचन और (3) काया का अशुभ योग प्रवर्ताया हो, (4) सामायिक की स्मृति न रखी हो, (5) समय पूर्ण हुए बिना सामायिक पारी हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(देशावकाशिक-शिक्षाव्रत-अतिचार-सूत्र)

दसवाँ देशावकाशिक-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं—नियमित सीमा के बाहर की (1) वस्तु मंगाई हो, (2) भिजवाई हो, (3) शब्द बोलकर चेताया हो, (4) रूप दिखा कर अपने भाव प्रकट किये हों, (5) कंकर आदि फैंक कर दूसरे को बुलाया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(पौषध-शिक्षा-व्रत-अतिचार-सूत्र)

ग्यारहवाँ प्रतिपूर्ण-पौषध-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो, तो आलोउं (1) पौषध में शय्या-संस्तारक न देखा हो या अच्छी तरह से न देखा हो, (2) शय्या-संस्तारक का प्रमार्जन न किया हो या अच्छी तरह से न किया हो, (3) उच्चार-प्रस्रवण की भूमि देखी न हो अथवा अच्छी तरह से न देखी हो, (4) उच्चार-प्रस्रवण की भूमि पूंजी न हो या अच्छी तरह से न पूंजी हो, (5) पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन न किया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(अतिथि-संविभाग-शिक्षाव्रत-अतिचार-सूत्र)

बारहवाँ अतिथि-संविभाग-व्रत के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) अचित्त वस्तु सचित्त पर रखी हो, (2) अचित्त वस्तु सचित्त से ढकी हो, (3) साधुओं को भिक्षा देने के समय को टाल दिया हो, (4) दान नहीं देने की बुद्धि से अपनी वस्तु दूसरे की कही हो, (5) ईर्ष्या-भाव से दान दिया हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(संलेखना-अतिचार-सूत्र)

अन्तिम-समय-सम्बन्धी मारणान्तिक-संलेखना की सेवना व आराधना के विषय जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं (1) इहलोक-सम्बन्धी सुख की आकांक्षा की हो,

(2) परलोक-सम्बन्धी सुख की आकांक्षा की हो, (3) प्रशंसा होने पर दीर्घकाल तक जीवित रहने की आकांक्षा की हो, (4) वेदना होने पर शीघ्र मरने की आकांक्षा की हो, (5) काम-भोग की आकांक्षा की हो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(समुच्चय-अतिचार-सूत्र)

इस प्रकार 14 ज्ञान के, 5 दर्शन-सम्यक्त्व के, 60 बारह व्रतों के, 15 कर्मादान के, 5 संलेखना के, इन 99 अतिचारों में किसी भी अतिचार का जानते-अजानते मन, वचन, काया से सेवन किया हो, कराया हो, करते को भला जाना हो, तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

(अठारह पाप-स्थान-सूत्र)

अठारह पाप-स्थान आलोउं-प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, पर-परिवाद, रति-अरति, माया-मृषावाद, मिथ्यादर्शन-शल्य, इन अठारह पाप-स्थानों में से किसी का सेवन किया हो, सेवन कराया हो और सेवन करते हुए को भला जाना हो, तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से तस्स आलोउं (तस्स मिच्छामि दुक्कडं)।

* * *

-नमो अरिहंताणं। (ध्यान खोलें।)

(कायोत्सर्ग-शुद्धि-सूत्र)

ध्यान में..... (पृष्ठ 10)

द्वितीय आवश्यक : चतुर्विंशति-स्तव

तिक्खुत्तो..... (तीन बार)

द्वितीय आवश्यक की आज्ञा

(खड़े होकर)

लोगस्स उज्जोयगरे..... (पृष्ठ 9)

तृतीय आवश्यक : वन्दन

तिक्खुत्तो..... (तीन बार)

-तृतीय आवश्यक की आज्ञा

(खड़े होकर)

(द्वादश-आवर्त-गुरु-वन्दन-सूत्र)

इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए, अणुजाणह मे मिउग्गहं, निसीहि (हाथ जोड़कर उकडू बैठ जावें) अ...हो का...यं का...य (ये तीन शब्द आवर्त्तन-अनुसार बोलें) संफासं खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहुसुभेणं भे दिवसो वइक्कंतो? जत्ता...भे जव...णि ज्जं च...भे? (आवर्त्तन-अनुसार) खामेमि खमासमणो देवसियं वइक्कमं आवस्सियाए (यहाँ पुनः खड़े हो जावें) पडिक्कमामि खमासमणाणं देवसियाए

आसायणाए तित्तीसन्नयराए जं किंचि मिच्छाए मणदुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए, कोहाए, माणाए, मायाए, लोहाए, सव्वकालियाए, सव्व-मिच्छोवयाराए, सव्व-धम्माइक्कमणाए आसायणाए, जो मे देवसिओ अइयारो कओ, तस्स खमासमणो! पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

(पुनः खड़े होकर पूर्वोक्त विधि-अनुसार द्वितीय बार पढ़ें।)

इच्छामि खमासमणो.....वोसिरामि।

(द्वितीय बार में 'आवस्सियाए' शब्द नहीं बोलना, न ही खड़े होना है)।

शब्दार्थ: इच्छामि=मैं चाहता हूँ **खमासमणो**=हे क्षमा-श्रमण **वंदिउं**=आपको वन्दना करना **जावणिज्जाए निसीहियाए**=आप अपनी ध्यान-साधना-भूमि या शिष्य के प्रवेश-योग्य भूमि में **मे अणुजाणह**=मुझे आज्ञा दीजिए **मिउग्गहं**=परिमित स्थान की **निसीहि**=आज्ञा प्राप्त होने पर, बैठकर **अहो कायं**=मैं करूँगा **काय-संफासं**=आपके शरीर का स्पर्श **खमणिज्जो**=आप क्षमा करें **भे**=मेरे स्पर्श से होने वाली आपके **किलामो**=शरीर की पीड़ा को **अप्प- किलंताणं भे**=पीड़ा से रहित आपश्री का **बहुसुभेणं**=बहुत सुख-शान्ति-पूर्वक **दिवसो वइक्कंतो**=आज का दिन बीता? **भे**=आपकी **जत्ता**=संयम-यात्रा निर्बाध है? **च**=और **भे**=आपश्री का **जवणिज्जं**=ध्यान और जप पीड़ा से रहित है? **खमासमणो**=हे क्षमा-श्रमण! **देवसियं**=मैं दिवस-सम्बन्धी **वइक्कमं**=अपने अपराध को **खामेमि**=खमाता हूँ **आवस्सियाए**=और अब मैं आवश्यक क्रिया करने के लिए **पडिक्कमामि**=निवृत्त होता हूँ **खमासमणाणं**=आप क्षमा-श्रमण की **देवसियाए**=दिवस से सम्बन्धित **तित्तीसन्नयराए**=तैंतीस में से किसी भी **आसायणाए**=आशातना के द्वारा **जं किंचि** =जिस किसी भी **मिच्छाए**=मिथ्याभाव से **मणदुक्कडाए**=दुष्ट मन से की हुई

चतुर्थ आवश्यक : प्रतिक्रमण

तिक्खुत्तो.....(तीन बार)

-चतुर्थ आवश्यक की आज्ञा।

(खड़े होकर)

आगमे तिविहे पण्णत्ते (पृष्ठ 16) से अठारह पापस्थान-सूत्र (पृष्ठ 26) तक सभी सूत्र पढें। सभी सूत्रों के अन्त में 'तस्स आलोउं' के स्थान पर 'तस्स मिच्छामि दुक्कडं' पढें, यथा–

आगमे तिविहे.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

अरिहन्तो.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

पहला व्रत-स्थूल.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

दूजा स्थूल-मृषावाद.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

तीजा स्थूल-अदत्तादान.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

वयदुक्कडाए=दुष्ट वचन से की हुई **कायदुक्कडाए**=शरीर की दुश्चेष्टाओं से की हुई **कोहाए**=क्रोध से की हुई **माणाए**=मान से की हुई **मायाए**=माया से की हुई **लोहाए**=लोभ से की हुई **सव्वकालियाए**=सब काल में की हुई **सव्व-मिच्छोवयाराए**=सब प्रकार के मिथ्याभावों से पूर्ण **सव्व-धम्माइक्कमणाए**=सब धर्मों का उल्लंघन करने वाली **आसायणाए**=आशातनाओं के द्वारा **जो**=जो भी **मे**=मैंने **अइयारो**=अतिचार **कओ**=किया हो **तस्स**=उसका **पडिक्कमामि**=प्रतिक्रमण करता हूँ **निन्दामि**=निन्दा करता हूँ **गरिहामि**=गुरु-साक्षी से निन्दा करता हूँ **अप्पाणं**=और उस आशातना-युक्त आत्मा का **वोसिरामि**=पूर्ण-रूप से परित्याग करता हूँ।

चौथा स्थूल-स्वदार.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
पांचवाँ स्थूल-परिग्रह.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
छठा दिशा-परिमाण .....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
सातवाँ उपभोग-परिभोग .....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
आठवाँ अनर्थ-दण्ड.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
नवमाँ सामायिक-व्रत.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
दसवाँ देशावकाशिक-व्रत.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
ग्यारहवाँ प्रतिपूर्ण पौषध.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
बारहवाँ अतिथि-संविभाग.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
अन्तिम समय-सम्बन्धी.....तस्स मिच्छामि दुक्कड ।
इस प्रकार 14 ज्ञान के.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।
अठारह पाप स्थान .....तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

(सर्व-अतिचार-सूत्र)

इच्छामि आलोइउं जो मे..... (पृष्ठ 14)

(सर्व-अतिचार-समाहार-सूत्र)

तस्स सव्वस्स देवसियस्स अइयारस्स दुब्भासिय-दुच्चिंतिय-दुचिट्ठियस्स आलोयन्तो पडिक्कमामि।

शब्दार्थ : तस्स सव्वस्स=उन सभी **देवसियस्स**=दिवस-सम्बन्धी **अइयारस्स** =अतिचार की **दुब्भासिय-दुच्चिंतिय**=दुर्वचन, दुष्ट विचार तथा **दुचिट्ठियस्स**= काया द्वारा किए गए दुष्ट व्यवहार की **आलोयन्तो**=आलोचना करता हुआ **पडिक्कमामि**=उससे निवृत्त होता हूँ।

श्रावक-सूत्र

तिक्खुत्तो.....(तीन बार)

-श्रावक-सूत्र की आज्ञा

(नीचे बैठकर, बायाँ घुटना नीचे मोड़कर, दायाँ घुटना खड़ा करके)

(नमस्कार-सूत्र)

नमो अरिहंताणं.....मंगलं।

(सामायिक-प्रतिज्ञा-सूत्र)

करेमि भंते! सामाइयं..... (पृष्ठ 14)

(चार शरण सूत्र)

चत्तारि मंगलं—अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पवज्जामि—अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि।

अरिहंतों का शरणा, सिद्धों का शरणा।

साधुओं का शरणा, केवली-प्ररूपित दया-धर्म का शरणा।।

चार शरणा, सुख करना, दुःख हरणा, और न शरणा कोय।

जो भव्य प्राणी आदरे, अक्षय-अमर-पद होय।।

शब्दार्थः चत्तारि मंगलं=चार मंगल हैं **अरिहंता मंगलं**=अरिहंत मंगल हैं **सिद्धा मंगलं**=सिद्ध मंगल हैं **साहू मंगलं**=साधु मंगल हैं, और **केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं**=केवली-प्ररूपित धर्म मंगल है **चत्तारि लोगुत्तमा**=चार पदार्थ लोक में उत्तम हैं **अरिहंता लोगुत्तमा**=अरिहंत लोकोत्तम हैं **सिद्धा लोगुत्तमा**=सिद्ध लोकोत्तम हैं **साहू लोगुत्तमा**=साधु लोकोत्तम हैं और **केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा**-केवली-प्ररूपित धर्म लोकोत्तम है **चत्तारि सरणं**=मैं चार शरणों को **पवज्जामि**=प्राप्त होता हूँ (ग्रहण करता हूँ) **अरिहंते सरणं पवज्जामि**=अरिहंतों की शरण को प्राप्त होता हूँ **सिद्धे सरणं पवज्जामि**=सिद्धों की शरण को प्राप्त होता हूँ **साहू सरणं पवज्जामि**=साधुओं की शरण को प्राप्त होता हूँ **केवलि-पण्णत्तं धम्मं**=केवली-प्ररूपित धर्म की **सरणं पवज्जामि**=शरण को प्राप्त होता हूँ।

(सर्व-अतिचार-शुद्धि-सूत्र)

इच्छामि पडिक्कमिउं जो मे देवसिओ.....(पृष्ठ 14)

(आलोचना-सूत्र)

इच्छाकारेण संदिसह भगवं.....(पृष्ठ 6)

(ज्ञान-अतिचार-सूत्र)

आगमे तिविहे.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं। (पृष्ठ 16)

(दर्शन-सम्यक्त्व-अतिचार-सूत्र)

परमत्थ-संथवो वा, सुदिट्ठ-परमत्थ-सेवणा वावि।
वावण्ण-कुदंसण-वज्जणा य सम्मत्त-सद्दहणा।
एवं समणोवासएणं सम्मत्तस्स पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—संका, कंखा, वितिगिच्छा, पर-पासंड-पसंसा, पर-पासंड-संथवो, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थः (प्रस्तुत गाथा का अर्थ पृष्ठ 18 पर है) **समणोवासएणं**=श्रावक के द्वारा **पेयाला**=मुख्य **जाणियव्वा**=जानने योग्य हैं **न समायरियव्वा**=आचरण के योग्य नहीं हैं **संका**=वीतराग-वचनों में सन्देह करना **कंखा**=पर-दर्शन की इच्छा करना **वितिगिच्छा**=धर्म के फल में सन्देह करना **पर-पासण्ड-पसंसा**=अन्य धर्मावलम्बियों की प्रशंसा करना **पर-पासंड-संथवो**=उन से अधिक परिचय, मेलजोल बढ़ाना।

(बारह व्रतों के अतिचार-सहित-सूत्र)

(1) **पहला अणुव्रत-थूलाओ पाणाइवायाओ वेरमणं। बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिंद्रिय, पंचेन्द्रिय-रूप निरपराधी त्रस जीवों को जान के, पहचान के, संकल्प करके मारने का पच्चक्खाण, परन्तु सगे-सम्बन्धी व स्व-शरीर के लिए पीड़ा देने वाले अपराधी को दण्ड देने का आगार, जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, ऐसे पहले स्थूल-प्राणातिपात-विरमण-व्रत के पंच अइयारा पेयाला जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तं जहा ते आलोउं-बंधे, वहे, छविच्छेए, अइभारे, भत्त-पाण-विच्छेए, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

शब्दार्थः **अणुव्रत**=महाव्रत की अपेक्षा छोटा व्रत **थूलाओ**=स्थूल-मोटा **पाणाइवायाओ**=प्राणातिपात से, जीव-हिंसा से **वेरमणं**=निवृत्त होना, अलग होना **पेयाला**-प्रधान, मुख्य **बंधे**=रोष-वश कठोर बंधन से बांधना **वहे**=निर्दयता से पीटना **छविच्छेए**=शरीर के किसी अवयव का छेदन करना **अइभारे**=अधिक भार लादना **भत्तपाणविच्छेए**=खाने-पीने में रुकावट डालना।

(2) दूजा अणुव्रत-थूलाओ मुसावायाओ वेरमणं। कन्नालीए, गोवालिए, भोमालिए, णासावहारो, कूड-सक्खिज्जे इत्यादिक मोटा झूठ बोलने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं दूजा स्थूल-मृषावाद-विरमण-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं-सहसब्भक्खाणे, रहस्सब्भक्खाणे, सदार (स-भत्तार)-मन्तभेए, मोसोवएसे, कूडलेह-करणे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शब्दार्थः मुसावायाओ=मृषावाद से **कन्नालीए**=कन्या एवं वर-संबंधी झूठ **गोवालीए**-गाय, भैंस आदि पशु-संबंधी झूठ **भोमालीए**=भूमि-सम्बन्धी झूठ **णासावहारो**-धरोहर को दबाना **कूड-सक्खिज्जे**=झूठी गवाही देना **सहस्सब्भक्खाणे**=किसी पर झूठा आरोप लगाना **रहस्सब्भक्खाणे**=एकान्त में मंत्रणा (सलाह) करते हुए व्यक्तियों पर झूठा आरोप लगाना **सदार (स-भत्तार) मंतभेए**=अपनी स्त्री (या पति) के गुप्त रहस्य प्रकट करना **मोसोवएसे**=झूठा उपदेश (सलाह) देना **कूडलेह-करणे**=झूठा लेख लिखना।

(3) तीजा अणुव्रत-थूलाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं। सेंध लगाना, गाँठ खोलना, ताले पर कुंजी लगाना, मार्ग में चलते को लूटना तथा पड़ी हुई बहुमूल्य वस्तु को चोरी की भावना से लेना इत्यादि स्थूल अदत्तादान का पच्चक्खाण, परन्तु सगे-सम्बन्धी, व्यापार-सम्बन्धी तथा पड़ी हुई अल्प मूल्य की वस्तु बिना आज्ञा के लेने का आगार, जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, एवं तीजा स्थूल अदत्तादान-विरमण-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—तेनाहडे, तक्कर-पओगे, विरुद्ध-रज्जाइक्कमे, कूडतुल्ल-कूडमाणे, तप्पडिरूवग-ववहारे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शब्दार्थः अदिण्णादाणाओ=चोरी से-स्वामी की बिना आज्ञा वस्तु को लेने से **तेनाहडे**=चोर की चुराई हुई वस्तु को लेना **तक्कर-पओगे**=चोर को सहायता देना, तस्करी करना **विरुद्ध-रज्जाइक्कमे**=राज्य-नियम-विरुद्ध काम करना **कूडतुल्ल-कूडमाणे**=झूठा तोल (बाट), तथा झूठा गज आदि का माप रखना **तप्पडिरूवग-ववहारे**=अधिक मूल्य की वस्तु में कम मूल्य की वस्तु को मिलाना या उत्तम वस्तु को दिखला कर निकृष्ट वस्तु देना।

(4) चौथा अणुव्रत-थूलाओ मेहुणाओ वेरमणं। सदार-संतोसिए अवसेसं मेहुणविहिं[1] पच्चक्खामि, जावज्जीवाए देव-देवी-सम्बन्धी दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा तथा मनुष्य-तिर्यंच-सम्बन्धी एगविहं एगविहेणं—न करेमि कायसा, एवं चौथा स्थूल-स्वदार-संतोष-परदार-विवर्जन-रूप-मैथुन-विरमण-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं- इत्तरिय-परिग्गहिया-गमणे,[2] अपरिग्गहिया-गमणे,[3] अणंगकीला, परविवाह-करणे, कामभोग-तिव्वाभिलासे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

---

1. **स्त्रियों को 'सभत्तार-संतोसिए अवसेसं मेहुणविहिं' बोलना चाहिए। जिसको सर्व प्रकार से मैथुन-सेवन का त्याग हो, उसको 'सदार संतोसिए अवसेसं मेहुण-विहिं' के स्थान पर 'सव्वप्पगारं मेहुणं' बोलना चाहिए।**
2. **स्त्रियों को 'परिग्गहिया-गमणे के स्थान पर 'परिग्गहिय-गमणे' बोलना चाहिए व (3) 'अपरिग्गहिया-गमणे' के स्थान पर 'अपरिग्गहिय-गमणे' बोलना चाहिए।**

शब्दार्थः मेहुणाओ वेरमणं=मैथुन (अब्रह्मचर्य) का त्याग **सदार** (स्त्री के लिए **'सभत्तार'**) = अपनी विवाहिता स्त्री में (अपने विवाहित पति में) **सन्तोसिए** = सन्तोष करना **अवसेसं**=अन्य स्त्रियों (पुरुषों) से **मेहुण-विहिं**=मैथुन-सेवन का **पच्चक्खामि**-प्रत्याख्यान **एगविहं एगविहेणं**=एक करण, एक योग से **न करेमि**=(मैथुन-सेवन) नहीं करना **कायसा**=काया से **इत्तरिय-परिग्गहिया-गमणे**= इत्वर-परिगृहीता (अल्प आयु वाली स्वस्त्री) से गमन करना **अपरिग्गहिया-गमणे**=अपरिगृहीता (सगाई की हुई स्वस्त्री) से गमन करना **अणंगक्रीड़ा**=अनंग-क्रीड़ा करना **पर-विवाह-करणे**=पराये का विवाह-नाता कराना **कामभोग-तिव्वाभिलासे**=काम-भोग की तीव्र अभिलाषा।

(5) **पांचवाँ अणुव्रत-थूलाओ परिग्गहाओ वेरमणं। क्षेत्र और भवन का, चांदी और सोने का, धन और धान्य का, द्विपद और चतुष्पद का एवं कुप्य-धातु आदि का जो परिमाण किया है, उसके उपरान्त अपना करके परिग्रह रखने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए एगविहं तिविहेणं—न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं पांचवाँ स्थूल-परिग्रह- परिमाण-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—खेत्त-वत्थु-पमाणाइक्कमे, हिरण्ण-सुवण्ण-पमाणाइक्कमे, धण-धाण्ण-पमाणाइक्कमे, दुपय-चउप्पय-पमाणाइक्कमे, कुविय-पमाणाइक्कमे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

शब्दार्थः खेत्त-वत्थु-पमाणाइक्कमे-खेत और घर आदि के परिमाण का उल्लंघन करना **हिरण्ण-सुवण्ण**=सोना, चांदी के परिमाण का **पमाणाइक्कमे** उल्लंघन करना **धण-धाण्ण-पमाणाइक्कमे**-धन और धान्य के परिमाण का उल्लंघन करना **दुपय-चउप्पय-पमाणाइक्कमे**-दास, दासी तथा गाय, घोड़ा आदि के परिमाण का उल्लंघन करना **कुविय-पमाणाइक्कमे**=कांसी, पीतल, तांबा, लोहा आदि धातु का तथा इनसे बने हुए बर्तन आदि और शय्या, आसन, वस्त्र आदि वस्तुओं के परिमाण का उल्लंघन करना।

(6) **छठा दिशा-परिमाण-व्रत—ऊर्ध्वदिशा का, अधोदिशा का और तिर्यक् दिशा का जो परिमाण किया है, उसके आगे जाकर पाँच आस्रव के सेवन का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए एगविहं तिविहेणं—न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं छठे दिशिव्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा-तंजहा ते आलोउं-उड्ढदिसि-पमाणाइक्कमे अहोदिसि-पमाणाइक्कमे, तिरियदिसि-पमाणाइक्कमे, खित्त-वुड्ढी, सइ-अन्तरद्धा, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

शब्दार्थः उड्ढ दिसि=ऊर्ध्व (ऊँची) दिशा के **पमाणाइक्कमे**=परिमाण का उल्लंघन करना **अहोदिसि**=अधो (नीची) दिशा के **पमाणाइक्कमे**=परिमाण का उल्लंघन करना **तिरियदिसि**=तिरछी दिशा के **पमाणाइक्कमे**=परिमाण का उल्लंघन करना **खित्त-वुड्ढी**-क्षेत्र बढ़ाना **सइ-अन्तरद्धा**-क्षेत्र-परिमाण में संदेह होने पर आगे चलना।

(7) सातवाँ व्रत-उवभोग-परिभोगविहिं पच्चक्खायमाणे (1) उल्लणिया-विहि (2) दंतण-विहि (3) फल-विहि (4) अब्भंगण-विहि (5) उवट्टण-विहि (6) मज्जण-विहि (7) वत्थ-विहि (8) विलेवण-विहि (9) पुप्फ-विहि (10) आभरण-विहि (11) धूव-विहि (12) पेज्ज-विहि (13) भक्खण-विहि (14) ओदण-विहि (15) सूप-विहि (16) विगय-विहि (17) साग-विहि (18) महुर-विहि (19) जीमण-विहि (20) पाणीय-विहि (21) मुखवास-विहि (22) वाहण-विहि (23) उवाणह-विहि (24) सयण-विहि (25) सचित्त-विहि (26) दव्व-विहि, इन 26 बोलों का जो परिमाण किया है, इसके उपरांत उपभोग-परिभोग-योग्य सब वस्तुओं को भोग-निमित्त से भोगने का पच्चक्खाण, जावज्जीवाए एगविहं तिविहेणं—न करेमि, मणसा, वयसा, कायसा एवं सातवाँ उवभोग-परिभोग दुविहे पण्णत्ते तं जहा-भोयणाओ य, कम्मओ य। भोयणाओ समणोवासएणं पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—सचित्ताहारे, सचित्त-पडिबद्धाहारे, अप्पउलि-ओसहि-भक्खणया,

दुप्पउलि-ओसहि-भक्खणया, तुच्छोसहि-भक्खणया। कम्मओ य णं समणोवासएणं पण्णरस कम्मादाणाइं जाणियव्वाइं, न समायरियव्वाइं, तंजहा ते आलोउं- इंगालकम्मे, वणकम्मे, साडीकम्मे, भाडीकम्मे, फोडीकम्मे, दंतवाणिज्जे, लक्ख-वाणिज्जे, रसवाणिज्जे, केसवाणिज्जे, विसवाणिज्जे, जंतपीलणकम्मे, निल्लंछणकम्मे, दवग्गि-दावणया, सर-दह-तलाय-सोसणया, असई-जण-पोसणया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थः उल्लणियाविहि=शरीर पोंछने के अंगोछे, तौलिए आदि वस्त्रों की मर्यादा करना । **दंतणविहि**=दाँतो को साफ करने के लिए दतौन, टूथपेस्ट, ब्रुश आदि पदार्थों की मर्यादा करना। **फलविहि**=आँवला, रीठा आदि फल से बाल धोने की या कुल्ला, गरारे करने की मर्यादा करना। **अब्भंगणविहि**=शरीर पर मालिश करने के लिए तैलादि द्रव्यों की मर्यादा करना। **उवट्टणविहि**-शरीर पर उबटन (पीठी आदि) की मर्यादा करना । **मज्जणविहि**-स्नान की संख्या और जल का परिमाण करना। **वत्थविहि**=वस्त्र की मर्यादा करना। **विलेवणविहि**-क्रीम, पाउडर, चन्दनादि का लेपन करने की मर्यादा करना **पुप्फविहि**=फूलों की तथा फूल-माला की जाति व संख्या की मर्यादा करना **आभरणविहि**=आभूषणों की मर्यादा करना। **धूवविहि**=धूप के द्रव्यों की मर्यादा करना। **पेज्जविहि**=दूध, शर्बत, चाय, शीतल-पेय आदि पीने की मर्यादा करना। **भक्खणविहि**=घेवर, बर्फी आदि पकवान की मर्यादा करना। **ओदणविहि**-रंधे हुए चावल, भात, खिचड़ी आदि की

मर्यादा करना। **सूपविहि**=मूंग, मसूर आदि दालों की मर्यादा **विगयविहि**-घी, तेल, दूध, दही, गुड़ आदि की मर्यादा करना। **सागविहि**=बथुआ आदि शाक-सब्जी की मर्यादा करना। **महुरविहि**=मधुर फलों (मेवा आदि) की मर्यादा करना। **जीमणविहि**=बड़ा, पकौड़ी, पूरणपोली, रोटी आदि जीमने के द्रव्यों की मर्यादा करना। **पाणीयविहि**=पीने के लिए पानी की मर्यादा करना। **मुखवासविहि**=लोंग, इलायची, सुपारी आदि मुख को सुगन्धित करने वाली वस्तुओं की मर्यादा करना। **वाहणविहि**=हाथी, घोड़े, रथ, कार, रेल, जहाज की मर्यादा करना। **उवाणहविहि**=चमड़े के जूते, मौजे आदि की मर्यादा करना। **सयणविहि**= शय्या, कुर्सी, गद्दा, सोफा की मर्यादा करना। **सचित्तविहि**=सचित्त वस्तु यथा-नमक, कच्चा पानी आदि की मर्यादा करना। **दव्वविहि**=खाने-पीने के काम आने वाले सचित्त या अचित्त सभी पदार्थ, उनकी मर्यादा करना। **उवभोग**=जो पदार्थ एक बार भोगने में आता है, जैसे इत्र, जल आदि। **परिभोग**=जो पदार्थ अनेक बार भोगने में आता है, जैसे वस्त्र, आभूषण इत्यादि। **दुविहे**=दो प्रकार का **भोयणाओ**=भोजन की अपेक्षा से **कम्मओ य**=और व्यापार की अपेक्षा से **सचित्ताहारे**=स्वीकृत मर्यादा से अधिक सचित्त पदार्थ का आहार करना। **सचित्त-पडिबद्धाहारे**=सचित्त वृक्षादि से सम्बद्ध गोंद, पके फल आदि खाना। **अप्पउलि-ओसहि-भक्खणया**=अग्नि से बिना पकी वस्तु का आहार करना। **दुप्पउलि-ओसहि-भक्खणया**=अधपकी वस्तु का भोजन करना। **तुच्छोसहि-भक्खणया**=तुच्छ औषधि (जिसमें सार भाग कम है) का भक्षण करना।

(8) **आठवाँ अनर्थ-दण्ड-विरमण-व्रत। चउव्विहे अणट्ठा-दण्डे पण्णत्ते, तंजहा-अवज्झाणाचरिए, पमायाचरिए, हिंसप्पयाणे, पाव-कम्मोवएसे। एवं अनर्थ-दण्ड-सेवन का पच्चक्खाण जावज्जीवाए दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, एवं आठवें अनर्थ -दण्ड-विरमण-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—कन्दप्पे, कुक्कुइए, मोहरिए, संजुत्ताहिगरणे उवभोग-परिभोगाइरित्ते, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

शब्दार्थः अणट्ठादंड=बिना प्रयोजन ऐसे काम करना, जिसमें जीवों की हिंसा होती है **अवज्झाणाचरिए**=आर्त्त-ध्यान और रौद्रध्यान के वश होकर, इष्ट-संयोग, अनिष्ट-वियोग की चिन्ता करना तथा किसी प्राणी को हानि पहुंचाने आदि का विचार करना। **पमायाचरिए**=मद्य, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा में लगे रहना। **हिंसप्पयाणे**-जिनसे जीवों की घात होती हैं, ऐसी तलवार, बन्दूक, कुदाली, फावड़ा आदि वस्तुएँ दूसरे को देना। **पावकम्मोवएसे**-जिन कामों से जीवों की हिंसा होती है, ऐसे मकान बनवाने, वृक्ष कटवाने, मुर्गी फार्म खुलवाने आदि का उपदेश देना। **कन्दप्पे**=काम-विकार उत्पन्न करने वाली कथाएँ करना **कुक्कुइए**=दूसरों को हँसाने के लिए भांडों की तरह हँसी-दिल्लगी करना या किसी की नकल करना। **मोहरिए**=ढीठता से निरर्थक बोलना। **संजुत्ताहिगरणे**= ऊखल, मूसल, शिला, लोढा, तलवार आदि हिंसाकारी हथियार या औजारों का प्रयोजन से अधिक संग्रह करना। **उवभोग-परिभोगाइरित्ते**=उपभोग और परिभोग में आने वाली वस्तुओं का अधिक संग्रह करना।

(9) **नवमाँ सामायिक व्रत-सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावनियमं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, ऐसी मेरी श्रद्धा और प्ररूपणा तो है, पर अवसर मिलने पर शुद्ध सामायिक करके आत्म-शुद्धि भी करूँ, ऐसे नवमें सामायिक-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—मण-दुप्पणिहाणे, वय-दुप्पणिहाणे, काय-दुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइ-अकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

शब्दार्थ : मण-दुप्पणिहाणे=मन के अशुभ योग प्रवर्तायें हों **वय-दुप्पणिहाणे**= वचन के अशुभ योग प्रवर्तायें हो **काय-दुप्पणिहाणे**=काया के अशुभ योग प्रवर्तायें हो **सामाइयस्स सइ अकरणया**=सामायिक की स्मृति न की हो **सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया**=समय पूर्ण हुए बिना सामायिक पारी हो या सामायिक व्यवस्थित रूप में न की हो।

(10) दसवाँ देशावकाशिक व्रत-प्रतिदिन प्रभात से प्रारम्भ करके पूर्वादि छहों दिशा में जितनी भूमिका की मर्यादा रखी हो, उसके उपरान्त आगे जाने का तथा दूसरों को भेजने का पच्चक्खाण, जाव अहोरत्तं दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा। जितनी भूमिका की मर्यादा रखी है, उसमें जो द्रव्यादिक की मर्यादा की है, उसके उपरान्त उपभोग-परिभोग-निमित्त से भोगने का पच्चक्खाण जाव अहोरत्तं एगविहं तिविहेणं—न करेमि मणसा, वयसा, कायसा, एवं दसवें देशावकाशिक-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा तंजहा ते आलोउं—आणवण-पओगे, पेसवण-पओगे, सद्दाणुवाए, रूवाणुवाए, बहिया पुग्गल-पक्खेवे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थः जाव अहोरत्तं=एक दिन-रात पर्यन्त **आणवण-पओगे**=मर्यादित क्षेत्र से आगे की वस्तु मंगाना **पेसवण-पओगे**=मर्यादित क्षेत्र से आगे की वस्तु को मंगवाने के लिए नौकर आदि को भेजना **सद्दाणुवाए**=सीमा से बाहर के मनुष्य को खाँस करके या और किसी शब्द के द्वारा बुलवाना। **रूवाणुवाए**=सीमा से बाहर के मनुष्यों को अपने पास बुलाने के लिए अपना या पदार्थ का रूप दिखाना **बहिया-पुग्गल-पक्खेवे**=सीमा से बाहर के मनुष्यों को बुलाने के लिए कंकर आदि फैंकना।

(11) ग्यारहवाँ प्रतिपूर्ण-पौषध-व्रत—असणं, पाणं, खाइमं साइमं का पच्चक्खाण, अब्रह्म-सेवन का पच्चक्खाण, सर्व-मणि-सुवर्ण का पच्चक्खाण, माला-वर्णक-विलेपन का पच्चक्खाण, शस्त्र-मुसलादि सावद्य-योग-सेवन का पच्चक्खाण जाव अहोरत्तं पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं—न करेमि, न कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा, ऐसी मेरी श्रद्धा और प्ररूपणा तो है, पर अवसर मिलने पर शुद्ध पौषध करके आत्म-शुद्धि भी करूँ, एवं ग्यारहवाँ प्रतिपूर्ण पौषध-व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—अप्पडिलेहिय-दुप्पडिलेहिय-सेज्जा-संथारए, अप्पमज्जिय-दुप्पमज्जिय-सेज्जा-संथारए, अप्पडिलेहिय-दुप्पडिलेहिय-उच्चार-पासवण-भूमी, अप्पमज्जिय-दुप्पमज्जिय-उच्चार-पासवण-भूमी, पोसहस्स सम्मं अणणुपालणया, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

शब्दार्थ : असणं=दाल, भात, रोटी आदि अन्न तथा दूध आदि विगय **पाणं**=जल-धोवन आदि पीने की वस्तु **खाइमं**=फल-मेवा, मिठाई आदि **साइमं**=लोंग, सुपारी, इलायची, चूर्ण आदि भोजन के बाद खाने लायक स्वादिष्ट पदार्थ **मणि-सुवर्ण**=मणि, मोती व सोने-चांदी आदि के आभूषण **माला**=फूलमाला **वर्णक**=सुगन्धित चूर्णादि **विलेपन**=चन्दन आदि **शस्त्र-मुसलादि**=मूसल आदि औजार **सावज्ज-जोग**=पाप-सहित व्यापार **अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय-सेज्जा-संथारए**=सोने के लिए कुश, कम्बल आदि का जो आसन है, उसको नहीं देखा हो या अच्छी तरह न देखा हो **अप्पमज्जिय-दुप्पमज्जिय**=परिमार्जन न किया हो या अच्छी तरह न किया हो **उच्चार-पासवण-भूमी**=मल-मूत्र त्याग करने की भूमि **पोसहस्स**=पौषध का **सम्मं**=सम्यक् प्रकार से **अणणुपालणया**=पालन न किया हो।

(12) **बारहवाँ अतिथि-संविभाग-व्रत—समणे णिग्गंथे फासुय-एसणिज्जेणं असण-पाण-खाइम-साइम-वत्थ-पडिग्गह-कम्बल-पाय-पुंछणेणं पडिहारिय-पीढ-फलग-सेज्जा-संथारएणं ओसह-भेसजेणं पडिलाभेमाणे विहरामि, ऐसी मेरी श्रद्धा-प्ररूपणा तो है, पर साधु-साध्वी का योग मिलने पर निर्दोष दान देकर शुद्ध होऊँ, एवं बारहवें अतिथि-संविभाग व्रत के पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं—सचित्त-निक्खेवणया, सचित्त-पिहणया, कालाइक्कमे, परोवएसे, मच्छरिआए, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छामि दुक्कडं।**

शब्दार्थः अतिथि-संविभाग-व्रत=जिसके आने की कोई तिथि या समय नियत नहीं हैं, ऐसे अतिथि साधु को अपने लिये बनाए भोजनादि में से कुछ हिस्सा देना **समणे**=श्रमण-साधु **णिग्गंथे**=निर्ग्रन्थ=राग-द्वेष की गाँठ से रहित **फासुय-एसणिज्जेणं**=प्रासुक (अचित्त) एषणीय (उद्गमादि दोष-रहित) वस्तु **असण-पाण-खाइम**=अशन, पान, खाद्य **साइम-वत्थ-पडिग्गह**=स्वाद्य, वस्त्र, पात्र **कम्बल-पाय-पुंछणेणं**=कम्बल, पाद-प्रौंछन (पांव पौंछने को रजोहरण आदि) **पडिहारिय-पीढ-फलग-सेज्जा-संथारएणं**=वापिस लौटा देने योग्य चौंकी, पट्टा, शय्या, तृण का आसन **ओसह-भेसजेणं**=औषध और भेषज (कई औषधियों के संयोग से बनी हुई गोलियां आदि) **पडिलाभेमाणे**=देता हुआ (बहराता हुआ) **विहरामि**=विहार करूँ (रहूँ) **सचित्त-निक्खेवणया**=साधु को नहीं देने की बुद्धि से अचित्त वस्तु की सचित्त पदार्थ पर रखना **सचित्त-पिहणया**=साधु को नहीं देने की बुद्धि से अचित्त वस्तु को सचित्त वस्तु से ढकना **कालाइक्कमे**=साधु के भोजन के काल का उल्लंघन करना **परोवएसे**=दान नहीं देने की बुद्धि से अपनी वस्तु को दूसरे की कहना । **मच्छरियाए**=दूसरों से ईर्ष्या कर के दान देना या दान देकर पश्चात्ताप करना।

(अब पालथी लगाकर बैठें और दोनों हाथ जोड़कर पढें)

(बड़ी संलेखना)

अह भंते अपच्छिम-मारणंतिय-संलेहणा-झूसणा-आराहणा-पौषधशाला पूंज के, उच्चार-पासवण-भूमिका पडिलेह के, गमणागमणे पडिक्कम के, दर्भादिक संथारा संथार के, दर्भादिक संथारा दुरूह के, पूर्व या उत्तर दिशा सन्मुख पल्यंकादिक आसन से बैठ के, करयल-संपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी "नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं" ऐसे अनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करके, 'नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपाविउकामाणं' जयवंते वर्तमान-काले महाविदेह-क्षेत्र में विचरते हुए तीर्थंकर भगवान् को नमस्कार करके, अपने धर्माचार्य जी महाराज को नमस्कार करता हूँ। साधु-प्रमुख चारों तीर्थों को खमाकर, सर्व जीवराशि को खमाकर पहले जो व्रत आदरे हैं, उनमें जो अतिचार दोष लगे हों, वे सर्व आलोच के, पडिक्कम के, निन्द के, निःशल्य होकर के, सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि, सव्वं मुसावायं पच्चक्खामि, सव्वं अदिण्णादाणं पच्चक्खामि, सव्वं मेहुणं पच्चक्खामि, सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि, सव्वं कोहं, माणं जाव मिच्छा-दंसण-सल्लं पच्चक्खामि, सव्वं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामि, जावज्जीवाए तिविहं तिविहेणं न करेमि,

न कारवेमि, करंतंपि अन्नं न समणुजाणामि, मणसा, वयसा, कायसा, ऐसे अठारह पाप-स्थानक पच्चक्ख कर, सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, ऐसे चारों आहार पच्चक्ख कर जं पि य इमं सरीरं इट्ठं, कंतं, पियं, मणुण्णं, मणामं, धिज्जं, विसासियं, संमयं, अणुमयं, बहुमयं, भण्ड-करण्ड-समाणं, रयण-करंडग-भूयं, मा णं सीयं, मा णं उण्हं, मा णं खुहा, मा णं पिवासा, मा णं वाला, मा णं चोरा, मा णं दंसमसगा, मा णं वाइयं, पित्तियं, कप्फियं, संभीमं, सण्णिवाइयं, विविहा रोगायंका परीसहा उवसग्गा फासा फुसंतु, एवं पि य णं चरमेहिं उस्सास-णिस्सासेहिं वोसिरामि ति कट्टु ऐसे शरीर को वोसिरा कर, कालं अणवकंखमाणे विहरामि, ऐसी मेरी श्रद्धा-प्ररूपणा तो है, फरसना करूँ तब शुद्ध होऊं। ऐसे अपच्छिम-मारणंतिय-संलेहणा-झूसणा-आराहणाए पंच अइयारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तंजहा ते आलोउं-इहलोगासंसप्पओगे, परलोगासंसप्पओगे, जीविया-संसप्पओगे, मरणासंसप्पओगे, कामभोगासंसप्पओगे, जो मे देवसिओ अइयारो कओ तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

शब्दार्थः अपच्छिम-मारणंतिय-संलेहणा=जीवन के अन्त में मृत्यु के समय होने वाली संलेखना अर्थात् जिसमें शरीर, कषाय,ममत्व आदि कृश (दुर्बल) किये

जाते हैं, ऐसा आमरण अनशन-तप **झूसणा**=संलेखना का सेवन करना **आराहणा**=संलेखना का अन्तकाल तक पालन करना **संथारा**=बिछौना **दुरूह के**=आरूढ़ होकर **करयल-संपरिग्गहियं**=हाथ जोड़कर **सिरसावत्तं**=मस्तक से आवर्त्तन करके **मत्थए अंजलि कट्टु**=मस्तक पर अंजलि रखकर **एवं वयासी**=इस प्रकार बोले **नमोत्थुणं**=नमस्कार हो **अरिहंताणं भगवंताणं**=अरिहन्त भगवान् को **जाव संपत्ताणं**=यावत् मोक्ष को प्राप्त हुए को **संपाविउकामाणं**=मोक्ष-प्राप्ति की कामना रखने वाले को **निः शल्य**=माया, मिथ्यादर्शन और निदान (नियाणा) इन तीन शल्यों से रहित **मिच्छादंसणसल्लं**=मिथ्यादर्शन-रूपी कंटक **अकरणिज्जं**=नहीं करने योग्य **इट्ठं, कंत, मणुण्णं, मणामं**=इष्ट, कांतियुक्त, अत्यन्त मनोहर **धिज्जं, विसासियं**=धैर्यशाली, विश्वास करने योग्य **संमयं, अणुमयं**=मानने योग्य, विशेष सम्मान को प्राप्त **बहुमयं**=बहुत माननीय **भण्ड-करण्ड-समाणं**=आभूषणों की पेटी के समान **रयण-करण्डग-भूयं**=रत्नों की पेटी के समान **मा णं सीयं**=इसे सर्दी न लगे **मा णं उण्हं**=गर्मी न लगे **मा णं खुहा**=भूख न लगे **मा णं वाला**=सर्प न काटे **मा णं चोरा**-चोरों का भय न हो **मा णं दंसमसगा**=डाँस और मच्छर न सतावें **मा णं वाइयं**=न वात **पित्तियं, कप्फियं**=पित्त,कफ रोग आएँ **संभीमं सण्णिवाइयं**=भयंकर सन्निपात **विविहा रोगायंका**=अनेक प्रकार की रोग-सम्बन्धी पीड़ाएँ **परीसहा**=क्षुधा आदि परिषह **उवसग्गा**=देव,तिर्यंच आदि द्वारा दिए गए कष्ट **फासा फुसंतु**=स्पर्श करें **चरमेहिं उस्सास-णिस्सासेहिं**= अन्तिम उच्छ्वास, नि:श्वासों (श्वासोच्छ्वासों) से **वोसिरामि ति कट्टु**=त्याग करता हूँ, ऐसा करके **कालं अणवकंखमाणे**=मृत्यु की आकांक्षा नहीं करता हुआ **विहरामि**=विचरण करता हूँ।

(पर्यालोचन-सूत्र)

ऐसे सम्यक्त्व-पूर्वक बारह व्रत एवं संलेखना, इनके विषय में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार, जानते, अजानते, मन, वचन, काया से सेवन किया हो, कराया हो, करते हुए को भला जाना हो, तो अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

(पाप-स्थान-प्रतिक्रमण-सूत्र)

अठारह पाप स्थान पडिक्कमिउं .....दुक्कडं। (पृष्ठ 26)

(फिर खड़े होकर, हाथ जोड़कर)

(विराधना-विरति-सूत्र)

तस्स धम्मस्स केवलि-पण्णत्तस्स अब्भुट्ठिओमि आराहणाए, विरओमि विराहणाए, तिविहेण पडिक्कंतो वन्दामि जिण-चउव्वीसं।

[फिर दो बार सविधि द्वादश-आवर्त-गुरु-वन्दन-सूत्र (पृष्ठ 27) पढें।]

इच्छामि खमासमणो.....वोसिरामि।

शब्दार्थः **विराहणाए**=विराधना से **विरओमि**=विरक्त हुआ हूँ **तिविहेण**= मन-वचन-काया द्वारा समस्त विराधना से **पडिक्कंतो**=निवृत्त होता हुआ **जिणचउव्वीसं**=मैं चौबीस तीर्थंकरों की **वंदामि**=वन्दना करता हूँ।

(फिर भाव-वन्दना की आज्ञा लेकर, दोनों घुटने नमाकर, घुटनों पर दोनों हाथ जोड़कर रखें और मस्तक नीचा नमाकर, नमस्कार-सूत्र बोल कर पंच-पद-वन्दना पढ़ें।)

(नमस्कार-सूत्र)

नमो अरिहंताणं.....।

पंच-पद-वन्दना

(श्री अरिहन्त-वन्दना)

पहले पद 'णमो अरिहन्ताणं' श्री अरिहंत भगवान् जघन्य बीस तीर्थंकर जी, उत्कृष्ट एक सौ साठ तथा एक सौ सत्तर देवाधिदेव जी, उनमें वर्तमान काल में बीस विहरमाण जी महाविदेह क्षेत्र में विचरते हैं। एक हजार आठ लक्षण के धारक, चौंतीस अतिशय, पैंतीस वाणी के गुणों से युक्त, चौंसठ इन्द्रों के वन्दनीय, अठारह दोष रहित, बारह गुण-सहित, अनन्त ज्ञान, अनंत दर्शन, अनन्त चारित्र, अनंत बल-वीर्य, दिव्य-ध्वनि, भा-मण्डल, स्फटिक-सिंहासन, अशोक-वृक्ष, कुसुमवृष्टि, देवदुन्दुभि, छत्र और चंवर से विराजित, पुरुषाकार-पराक्रम के धारक, अढाई द्वीप, पन्द्रह क्षेत्र में विचरें, जघन्य दो करोड़ केवली और उत्कृष्ट नौ करोड़ केवली, केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन के धारक, सर्व द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के ज्ञाता हैं।

सवैया—नमूं श्री अरिहन्त, करमों का किया अन्त, हुआ सो केवलवन्त, करुणा-भण्डारी है। अतिशय चौंतीस धार, पैंतीस वाणी उच्चार, समझावें नर-नार, पर-उपकारी है। शरीर सुन्दराकार, सूरज सो झलकार, गुण हैं अनन्त-सार, दोष परिहारी है। कहत है तिलोक रिख, मन वच काय करी, झुकि-झुकि बारम्बार वन्दना हमारी है॥

ऐसे श्री अरिहन्त भगवन्त दीनदयाल महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय-आशातना की हो, तो हे अरिहन्त भगवान्! मेरा अपराध बारम्बार क्षमा करिये। हाथ जोड़, मान मोड़, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से 1008 बार वन्दना-नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो.....(तीन बार)

आप मांगलिक हो, उत्तम हो। हे स्वामिन्! हे नाथ! आपका इस भव-परभव भव-भव में सदा काल शरण हो।

(श्री सिद्ध-वन्दना)

दूसरे पद 'णमो सिद्धाणं' श्री सिद्ध भगवान्, पन्द्रह भेदे अनन्त सिद्ध हुए हैं। आठ कर्म खपाकर मोक्ष पहुंचे हैं। तीर्थसिद्धा, अतीर्थसिद्धा, तीर्थंकर-सिद्धा अतीर्थंकर-सिद्धा, स्वयंबुद्ध-सिद्धा, प्रत्येकबुद्ध-सिद्धा, बुद्धबोधित-सिद्धा, स्त्रीलिंग-सिद्धा, पुरुषलिंग-सिद्धा, नपुंसकलिंग-सिद्धा, स्वलिंग-सिद्धा, अन्यलिंग-सिद्धा, गृहस्थलिंग-सिद्धा, एक सिद्धा, अनेक सिद्धा, जहाँ जन्म नहीं, जरा नहीं, मरण नहीं, भय नहीं, रोग नहीं, शोक नहीं, दुःख नहीं, दारिद्र्य नहीं, कर्म नहीं, काया नहीं, मोह नहीं, माया नहीं, चाकर नहीं, ठाकर नहीं, भूख नहीं, तृषा नहीं, ज्योति में ज्योति विराजमान, सकल कार्य सिद्ध करके चौदह प्रकारे, पन्द्रह भेदे अनन्त सिद्ध भगवान् हुए हैं। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, क्षायिक सम्यक्त्व, अटल अवगाहना, अमूर्तिक, अगुरुलघु, अनन्त बल-वीर्य, ये आठ गुण-सहित हैं।

सवैया-सकल करम टाल, वश कर लियो काल, मुक्ति में रह्या माल, आत्मा को तारी है। देखत सकल भाव, हुआ है जगत राव, सदा ही क्षायिक-भाव, भये अविकारी है। अचल अटल रूप, आवे नहीं भव-कूप, अनूप सरूप ऊप, ऐसे सिद्ध धारी है। कहत है तिलोक रिख, बताओ ए वास प्रभु, सदा ही उगंते सूर, वन्दना हमारी है।

ऐसे श्री सिद्ध भगवन्त जी महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय आशातना की हो, तो बारम्बार हे सिद्ध भगवान्! मेरा अपराध क्षमा करिये। हाथ जोड़, मान मोड़, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से 1008 बार वंदना-नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो..... (तीन बार)

आप मांगलिक हो, उत्तम हो। हे स्वामिन्! हे नाथ! आपका इस भव-परभव भव-भव में सदा काल शरण हो।

(श्री आचार्य-वन्दना)

तीसरे पद 'णमो आयरियाणं' श्री आचार्य जी महाराज, छत्तीस गुण-सहित विराजमान, पाँच महाव्रत पालें, पाँच आचार पालें, पाँच इन्द्रिय जीतें, चार कषाय टालें, नव बाड़-सहित शुद्ध ब्रह्मचर्य पालें, पाँच समिति, तीन गुप्ति शुद्ध आराधें। ये 36 गुण और आठ सम्पदा (1) आचार-सम्पदा, (2) श्रुत-सम्पदा, (3) शरीर-सम्पदा, (4) वचन-सम्पदा, (5) वाचना-सम्पदा, (6) मति-सम्पदा, (7) प्रयोग-मति सम्पदा, (8) संग्रह-परिज्ञा-सम्पदा सहित हैं।

सवैया-गुण हैं छत्तीस पूर, धारत धरम उर, मारत करम क्रूर सुमति विचारी है। शुद्ध सो आचारवन्त, सुन्दर है रूप कन्त, भण्या है सभी सिद्धान्त, वाचणी सुप्यारी है। अधिक मधुर वेण, कोई नहीं लोपे केण, सकल जीवों का सेण, कीरति अपारी है। कहत है तिलोक रिख, हितकारी देत सीख, ऐसे आचारज ताकूं, वन्दना हमारी है।

ऐसे श्री आचार्य जी महाराज न्यायपक्ष वाले, भद्रिक परिणामी, परम पूज्य, कल्पनीय-अचित्त वस्तु के ग्रहण करने वाले, सचित्त के त्यागी, वैरागी, महागुणी, गुणों के अनुरागी, सौभागी हैं। ऐसे श्री आचार्य जी महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय-आशातना की हो, तो बारम्बार हे आचार्य जी महाराज! मेरा अपराध क्षमा करिये। हाथ जोड़, मान मोड़, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से 1008 बार वन्दना-नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो.....(तीन बार)

आप मांगलिक हो, उत्तम हो। हे स्वामिन्! हे नाथ! आपका इस भव-परभव भव-भव में सदा काल शरण हो।

(श्री उपाध्याय-वन्दना)

चौथे पद 'णमो उवज्झायाणं' श्री उपाध्याय जी महाराज, ग्यारह अंग, बारह उपांग, चरण-सत्तरी, करण-सत्तरी, इन पच्चीस गुण-सहित हैं तथा ग्यारह अंग का पाठ अर्थ-सहित

सम्पूर्ण जानें, चौदह पूर्व के पाठक तथा निम्नोक्त बत्तीस सूत्रों के जानकार हैं–

ग्यारह अंग-आचारांग, सूत्र-कृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्या-प्रज्ञप्ति, ज्ञाता-धर्म-कथांग, उपासक-दशांग, अन्तकृत्-दशांग, अनुत्तरौपपातिक, प्रश्न-व्याकरण, विपाक-श्रुत।

बारह उपांग-औपपातिक, राज-प्रश्नीय, जीवाजीवाभिगम, प्रज्ञापना, जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति, चन्द्र-प्रज्ञप्ति, सूर्य-प्रज्ञप्ति, निरयावलिया, कल्पावतंसिका, पुष्पिका, पुष्प-चूलिका, वृष्णि-दशा।

चार मूल-सूत्र-उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, नन्दी, अनुयोग-द्वार।

चार छेद-सूत्र-दशाश्रुत-स्कन्ध, बृहत्कल्प, व्यवहार-सूत्र, निशीथ-सूत्र और बत्तीसवाँ आवश्यक-सूत्र। इनके अतिरिक्त अन्य अनेक ग्रन्थों के जानकार, सात नय, निश्चय-व्यवहार, चार प्रमाण आदि स्वमत तथा अन्य मत के जानकार, मनुष्य या देवता कोई भी विवाद में जिनको छलने में समर्थ नहीं, जिन नहीं, पर जिन-सरीखे, केवली नहीं, पर केवली-सरीखे हैं।

सवैया–पढ़त इग्यारह अंग, करमों सू करे जंग, पाखण्डी को मान भंग, करण हुशियारी है। चौदह पूरब धार, जानत आगम-सार, भवियन के सुखकार, भ्रमता निवारी है। पढ़ावे भविक जन, स्थिर कर देत मन, तप करी तावे तन, ममता को मारी है। कहत है तिलोक रिख, ज्ञान-भानु परतिख, ऐसे उपाध्याय ताकूं, वन्दना हमारी है॥

ऐसे श्री उपाध्याय जी महाराज मिथ्यात्वरूप अन्धकार के नाशक, समकित-रूप उद्योत के कर्ता, धर्म से डिगते प्राणी को स्थिर करें, सारणा-वारणा-धारणा करने वाले हैं। ऐसे श्री उपाध्याय जी महाराज! आपकी दिवस-सम्बन्धी अविनय आशातना की हो, तो बारम्बार हे उपाध्याय जी महाराज! मेरा अपराध क्षमा करिये। हाथ जोड़, मान मोड़, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से 1008 बार वंदना-नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो.....(तीन बार)

आप मांगलिक हो, उत्तम हो। हे स्वामिन्! हे नाथ! आपका इस भव-परभव भव-भव में सदा काल शरण हो।

(श्री साधु-वन्दना)

पाँचवें पद 'णमो लोए सव्वसाहूणं' अढ़ाई द्वीप-पन्द्रह क्षेत्र-रूप लोक में सर्व साधु जी महाराज जघन्य दो हजार करोड़, उत्कृष्ट नौ हजार करोड़ जयवन्ता विचरें, पाँच महाव्रत पालें, पाँच इन्द्रिय जीतें, चार कषाय टालें, भाव-सत्य, योग-सत्य, करण-सत्य, क्षमावन्त, वैराग्यवन्त, मन, वचन व काया की समाधारणा करने वाले, ज्ञान से सम्पन्न, दर्शन से सम्पन्न, चारित्र से सम्पन्न, साता-असाता-रूप वेदना को समता से सहने वाले तथा मारणान्तिक कष्ट को भी समता से सहन करने वाले, इन सत्ताइस गुणों से सहित हैं। पाँच आचार पालें, छह काया की रक्षा करें, सात भय त्यागें, आठ मद छोड़ें, नव बाड़-सहित ब्रह्मचर्य पालें, दस प्रकार का

यति-धर्म धारें, बारह भेदे तपस्या करें, सत्रह भेदे संयम पालें, अठारह पापों को त्यागें, बाईस परीषह जीतें, तीस महामोहनीय कर्म निवारें, तैंतीस आशातना टालें, बयालीस दोष टाल कर आहार पानी लेवें, सैंतालीस दोष टाल के भोगें, बावन अनाचार टालें, निमंत्रण स्वीकार नहीं करें, सचित्त के त्यागी, अचित्त के भोगी, लोच करें, नंगे पैर चलें इत्यादि काय-क्लेश करें और मोह-ममता से रहित हैं।

सवैया–आदरी संयम भार, करणी करे अपार, समिति गुपति धार, विकथा निवारी है। जयणा करे छ काय, सावद्य न बोले वाय, बुझाइ कषाय लाय, किरिया भंडारी हैं। ज्ञान भणें आठों याम, लेवे भगवंत नाम, धरम को करे काम, ममता कूं मारी है। कहत है तिलोक रिख, कर्मों का टाले विख, ऐसे मुनिराज ताकूं वंदना हमारी है॥

ऐसे श्री मुनिराज जी महाराज! आपकी दिवस-सम्बंधी अविनय आशातना की हो तो बारम्बार हे मुनिराज ! मेरा अपराध क्षमा करिये। हाथ जोड़, मान मोड़, शीश नमाकर तिक्खुत्तो के पाठ से 1008 बार वंदना-नमस्कार करता हूँ।

तिक्खुत्तो.....(तीन बार)

आप मांगलिक हो, उत्तम हो। हे स्वामिन्! हे नाथ! आपका इस भव-परभव भव-भव में सदा काल शरण हो।

(श्री गुरुदेव-वन्दना-1)

सवैया–जैसे कपड़े को थान, दरजी वेतत आण, खंड-खंड करे जाण, देत सो सुधारी है। काठ के ज्यों सूत्रधार, हेम को कसे सुनार, माटी के ज्यों कुम्भकार, पात्र करे त्यारी है। धरती को कीरसाण, लोहे को लुहार जाण, शीलवाट शिला आण, घाट घड़े भारी है। कहत है तिलोक रिख, सुधारे ज्यों गुरु सिख, गुरु उपकारी नित, लीजे बलिहारी है॥

(श्री गुरुदेव-वन्दना-2)

सवैया–गुरु मित्र गुरु मात, गुरु सगा, गुरु तात, गुरु भूप, गुरु भ्रात, गुरु हितकारी है। गुरु रवि, गुरु चन्द्र, गुरु पति, गुरु इन्द्र, गुरुदेव दे आनन्द, गुरु-पद भारी है। गुरु देत ज्ञान-ध्यान, गुरु देत दान-मान, गुरु देत मोक्ष-स्थान, सदा उपकारी है। कहत है तिलोक रिख, भली भली देत सीख, पल-पल गुरु जी को वन्दना हमारी है ॥

फिर खड़े होकर (या पालथी लगाकर) निम्न सूत्र पढ़ें–

1. अनन्त चौबीसी जिन नमूं, सिद्ध अनन्ता कोड़।
   केवल ज्ञानी गणधरा, बन्दूं बे कर जोड़॥
2. दो कोड़ी केवलधरा, विहरमाण जिन बीस।
   सहस-युगल कोड़ी नमूं, साधु नमूं निशदीश॥
3. धन साधु, धन साधवी, धन-धन है जिन धर्म।
   ये सुमर्यां पातक झरें, टूटें आठों कर्म ॥

4. अरिहन्त सिद्ध सिमरूं सदा, आचारज उपाध्याय।
साधु सकल के चरण को, वन्दूं शीश नवाय॥
5. शासन-नायक सुमरिये, भगवन्त वीर जिणंद।
अलिय-विघन दूरे हरे, आपे परमानन्द ॥
6. अंगुष्ठे अमृत बसे, लब्धि तणा भण्डार।
श्री गुरु गौतम सिमरिये, वांछित फल-दातार॥

(आचार्य-उपाध्याय-सूत्र)

1. आयरिय उवज्झाए, सीसे साहम्मिए कुल गणे य।
जे मे केइ कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि ॥
2. सव्वस्स समण-संघस्स, भगवओ अंजलि करिय सीसे।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि॥
3. सव्वस्स जीव-रासिस्स, भावओ धम्म-निहिय-निय-चित्तो।
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयं पि॥

शब्दार्थ: आयरिय=आचार्य जी व **उवज्झाए**=उपाध्याय जी महाराज **सीसे**=शिष्यों, **साहम्मिए**=साधर्मिकों **कुल**=एक गुरु का शिष्य-समुदाय **गणे**=अनेक कुलों के समूह पर **जे**=जो **केइ**=कुछ **कसाया**=क्रोधादि कषाय (किए हों) **सव्वे**=सब को **तिविहेण**=तीन योग से (मन, वचन, काया से) **खामेमि**=खमाता हूँ, क्षमा चाहता हूँ। **सव्वस्स**=सभी **भगवओ**=पूजनीय **समण-संघस्स**=साधु-समुदाय को **सीसे**=सिर पर **अंजलि**=दोनों हाथ जोड़ **करिअ**=करके **खमावइत्ता**=क्षमा मांग करके, **खमामि**=क्षमा करता हूँ **सव्वस्स**=सब को **अहयं पि**=मैं भी **सव्वस्स**=सभी **जीवरासिस्स**=जीव-राशि से **भावओ**=भाव से **धम्म-निहिय-निय-चित्तो**=धर्म में अपने चित्त को स्थिर करके **सव्वे**=सब को **खमावइत्ता**=क्षमा मांग करके **खमामि**=क्षमा करता हूँ।

(अढ़ाई द्वीप का पाठ)

अढ़ाई द्वीप-पन्द्रह क्षेत्र में श्रावक-श्राविका दान देवें, शील पालें, तपस्या करें, शुभ भावना भावें, संवर करें, सामायिक करें, पौषध करें, प्रतिक्रमण करें, तीन मनोरथ चिंतवें, चौदह नियम चितारें, जीवादिक नव पदार्थ जानें, श्रावक के इक्कीस गुणों से युक्त, एक व्रतधारी यावत् बारह व्रतधारी, जो भगवान् की आज्ञा में विचरें, ऐसे बड़ों से हाथ जोड़, पैर पड़कर क्षमा मांगता हूँ। आप क्षमा करें, आप क्षमा करने योग्य हैं और छोटों से समुच्चय खमाता हूँ।

(चौरासी लाख जीव-योनि का पाठ)

सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेउकाय, सात लाख वायुकाय, दस लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय, दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख तेइन्द्रिय, दो लाख चउरिंद्रिय, चार लाख देवता, चार लाख नारकी, चार लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य, ऐसे चार गति में चौरासी लाख जीवयोनि के सूक्ष्म-बादर, पर्याप्त-अपर्याप्त जीवों में से किसी जीव का हालते, चालते, उठते, बैठते, सोते, हनन किया हो, कराया हो, हनतां प्रति अनुमोदन किया हो, छेदा हो, भेदा हो, किलामणा उपजाई हो, तो मन, वचन, काया करके अठारह लाख, चौबीस हजार, एक सौ बीस प्रकारे[1] तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

---

1. जीव तत्त्व के 563 भेदों को अभिहया, वत्तिया आदि दस प्रकार की विराधनाओं के साथ गुणा करने से 5630 भेद होते हैं। फिर इनको राग और द्वेष के साथ द्विगुण करने से 11260 भेद बनते हैं। फिर इन्हीं को

(क्षमापना-सूत्र)

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झं न केणई॥
एवमहं आलोइय, निंदिय गरहिय दुगंछिय सम्मं।
तिविहेण पडिक्कंतो, वंदामि जिण चउव्वीसं॥

शब्दार्थ : खामेमि सव्वे जीवा=मैं सभी जीवों को क्षमा करता हूँ **सव्वे जीवा**= सब जीव **मे खमंतु**=मुझको क्षमा करें **मे सव्वभूएसु**=मेरी सम्पूर्ण प्राणियों से **मित्ती**-मित्रता है **मज्झं**=मेरा **वेरं न केणइ**=किसी से भी वैर नहीं है। **एवमहं**=इस प्रकार मैं **आलोइय**=अपनी आलोचना करके **निंदिय**=आत्मसाक्षी से निन्दा करके **गरहिय**=गुरु-साक्षी से गर्हा करके **दुगुंछिय**=जुगुप्सा (ग्लानि, घृणा) करके **तिविहेण**=मन, वचन, काया द्वारा **पडिक्कंतो**=पापों से निवृत्त होता हुआ **चउव्वीसं**=चौबीस **जिण**=अरिहन्त भगवान् को **वन्दामि**=वन्दना करता हूँ।

मन, वचन और काया के साथ त्रिगुणा करने से 33780 भेद हो जाते हैं। फिर इनको ही तीन करणों के साथ गुणा करने से 101340 भेद बन जाते हैं। इनको भी फिर तीन काल के साथ गुणा करने से 304020 भेद हो जाते हैं। फिर इनको अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, गुरु और आत्मा, इस प्रकार छह से गुणा करने पर 1824120 भेद बनते हैं अर्थात् इस प्रकार से मैं 'मिच्छामि दुक्कडं' देता हूं और फिर पापकर्म न करने की प्रतिज्ञा करता हूँ।

पंचम आवश्यक: कायोत्सर्ग

तिक्खुत्तो.....(3 बार)

-पंचम आवश्यक की आज्ञा

(खड़े होकर)

(प्रायश्चित्त-विशुद्धि-सूत्र)

इच्छामि भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे देवसिय-पायच्छित्त-विसोहणत्थं करेमि काउस्सग्गं।

(नमस्कार-सूत्र)

नमो अरिहंताणं.....हवइ मंगलं।

(सामायिक-प्रतिज्ञा-सूत्र)

करेमि भंते! सामाइयं.....(पृष्ठ 14)

(सर्व-अतिचार-सूत्र)

इच्छामि ठामि काउसग्गं.....दुक्कडं। (पृष्ठ 14)

(कायोत्सर्ग-प्रतिज्ञा-सूत्र)

तस्स उत्तरीकरणेणं.....अप्पाणं वोसिरामि।

(अप्पाणं' बोलते ही ध्यान प्रारम्भ करें।)

(देवसी व रात्रि के प्रतिक्रमण में चार, पक्खी को आठ, चातुर्मासी को बारह तथा संवत्सरी को बीस 'लोगस्स' का ध्यान करें)

लोगस्स.....दिसंतु।

-नमो अरिहंताणं। (ध्यान खोलें)

(कायोत्सर्ग-शुद्धि-सूत्र)

ध्यान में..... (पृष्ठ 10)

(एक 'लोगस्स' खुला पढें)

लोगस्स.....मम दिसन्तु।

(दो बार विधि-सहित द्वादश-आवर्त गुरु-वन्दन-सूत्र पढें।)

इच्छामि खमासमणो..... ..... (पृष्ठ 27)

षष्ठ आवश्यक: प्रत्याख्यान

तिक्खुत्तो..... (तीन बार)

-षष्ठ आवश्यक 'पच्चक्खाण' की कृपा करें।

(साधु/साध्वी विराजते हों तो उनसे, अन्यथा बड़े श्रावक जी से पच्चक्खाण मांगें। कोई योग न हो तो निम्न पाठ से यथाशक्ति पच्चक्खाण लें। पच्चक्खाण लेने पर 'अप्पाणं वोसिरामि' बोले)[1]

---

1. पक्खी की एक आसन की पाँच सामायिक या खुली छः सामायिक, चातुर्मासी की 25 सामायिक तथा संवत्सरी की 250 सामायिक या एक प्रतिपूर्ण पौषध या दो व्रत या चार आयम्बिल या आठ एकाशन विशेष प्रायश्चित्त-रूप में भेंट स्वीकार करें।

(समुच्चय-प्रत्याख्यान-सूत्र)

गंठि-सहियं, मुट्ठि-सहियं, नमुक्कार-सहियं, पोरिसियं, साड्ढ-पोरिसियं (अपनी-अपनी इच्छा-अनुसार) **तिविहं पि चउविहं पि आहारं—असणं, पाणं, खाइमं, साइमं** (अपनी-अपनी धारणा-प्रमाणे पच्चक्खाण) **अण्णत्थणाभोगेणं सहसागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्व-समाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि।**

शब्दार्थ : गंठिसहियं=गाँठ-सहित अर्थात् जब तक मैं गाँठ बंधी रखूँ, तब तक **मुट्ठिसहियं**=मुटठी-सहित अर्थात् जब तक मैं मुट्ठी बंधी रखूँ, तब तक **नमुक्कार-सहियं**=नवकारसी [सूर्योदय से लेकर एक मुहूर्त (48 मिनट) तक का त्याग] **पोरिसियं**=एक पहर का त्याग **साड्ढ-पोरिसहियं**=डेढ पहर तक त्याग **अण्णत्थणाभोगेणं**=बिना उपयोग के कोई वस्तु मुंह में गिर जाए **सहसागारेणं**= अकस्मात्, जैसे पानी बरसता हो और मुख में छींटें पड़ जावें या छाछ बिलौते समय मुंह में छींटें पड़ जावें, तो मेरे आगार है। **महत्तरागारेणं**=महापुरुषों के आधार से अर्थात् महापुरुषों के निमित्त से त्याग का भंग करना पड़े, तो इसका मेरे आगार हैं **सव्वसमाहिवत्तियागारेणं**=सब प्रकार की शारीरिक, मानसिक नीरोगता रहे, तब तक अर्थात् शरीर में भयंकर रोग हो जाय, तो दवाई का आगार है।

(अन्तिम पाठ)

(खड़े होकर)

सामायिक एक, चउवीसत्थव दो, वन्दना तीन, प्रतिक्रमण चार, कायोत्सर्ग पाँच, पच्चक्खाण छः। प्रतिक्रमण अविधि से किया हो, सूत्र-विपरीत किया हो, इन छः आवश्यकों में जानते-अजानते कोई अतिचार-दोष लगा हो तथा पाठ उच्चारण करते समय काना, मात्रा, अनुस्वार, पद, अक्षर न्यूनाधिक आगे पीछे कहा हो, तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण, अव्रत का प्रतिक्रमण, प्रमाद का प्रतिक्रमण, कषाय का प्रतिक्रमण, अशुभ-योग का प्रतिक्रमण, इन पाँच प्रतिक्रमण में से कोई प्रतिक्रमण न किया हो तथा चलते, फिरते, उठते, बैठते, पढ़ते, गुणते, जानते, अजानते, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप-संबंधी कोई दोष लगा हो, तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

गए काल का प्रतिक्रमण, वर्तमान काल की सामायिक[1] और आगामी काल का पच्चक्खाण, इनमें जो कोई दोष लगा हो, तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

देव अरिहंत, गुरु निर्ग्रन्थ, केवली-भाषित दयामय धर्म, ये तीन तत्त्व सार, संसार असार। भगवन्त महाराज! आपका मार्ग सत्य है, सत्य है, सत्य है।

---

1. सामायिक, संवर या पौषध जो भी उस समय हो, वह बोलना चाहिए।

(फिर विधि-सहित दो बार प्रणिपात-सूत्र पढें।)

नमोत्थुणं..... (पृष्ठ 11)

(प्रतिक्रमण-समाप्ति पर विराजित साधु/साध्वियों को सविधि वन्दना करें, उपस्थित श्रावक/श्राविकाओं को जय-जिनेन्द्र कहें, तथा आगे लिखे स्तोत्रों का सामूहिक गायन करें।)

****

उपवास उतारने की विधि

एक से तीस तक लगातार उपवास (मासखमण) करें, तो उसमें छुटक (पृथक्-पृथक्) कितने उपवास उतरें, उसकी पुरानी परम्परानुसार जानकारी निम्न प्रकार से है—

उपवास-एक उपवास

दो उपवास लगातार करें, तो छुटक पाँच उपवास उतरें।

तीन उपवास लगातार करें, तो छुटक पच्चीस उपवास उतरें।

चार उपवास लगातार करें, तो छुटक एक सौ पच्चीस उपवास उतरें।

पाँच उपवास लगातार करें, तो छुटक छः सौ पच्चीस उपवास उतरें।

छः उपवास लगातार करें, तो छुटक तीन हजार एक सौ पच्चीस उपवास उतरें।

सात उपवास लगातार करें, तो छुटक पन्द्रह हजार छः सौ पच्चीस उपवास उतरें।

आठ (अट्ठाई) उपवास लगातार करें, तो अट्ठत्तर हजार एक सौ पच्चीस उपवास उतरें।

इस विधि से जैसे-जैसे उपवास बढ़ते हैं, वैसे-वैसे अलग-अलग उपवास का प्रमाण पाँच गुणा जानना चाहिए।

उपवास पर पौरसी चढ़ावे तो दुगुना फल मिलता है—जैसे तेले के

ऊपर पोरसी चढ़ाने पर 50 उपवास, अट्ठाई पर पौरसी चढ़ावें तो एक लाख छप्पन हजार दो सौ पचास उपवास हैं।

—दो आयंबिल से एक उपवास उतरता है।
—तीन नीवी से एक उपवास उतरता है।
—चार एकासन से एक उपवास उतरता है।
—आठ बियासन से एक उपवास उतरता है।
—24 पोरसी से एक उपवास उतरता है।
—168 गाथा की स्वाध्याय करने से डेढ़ पोरसी उतरती है।
—225 गाथा की स्वाध्याय करने से दो पोरसी उतरती है।
—500 गाथा की स्वाध्याय करने से एक एकाशन उतरती है।
—700 गाथा की स्वाध्याय करने से एक नीवी उतरती है।
—1000 गाथा की स्वाध्याय करने से एक आयंबिल उतरता है।
—2000 गाथा की स्वाध्याय करने से एक उपवास उतरता है।
—एक साथ 20 पक्की माला फेरने से एक उपवास उतरता है।
—85 नवकारसी करने से एक उपवास उतरता है।

दो दिन सलंग लीलोतरी (कच्ची-पक्की हरी) का त्याग करने से एक उपवास उतरता है।

पौषध उतारने की विधि

छुटक 250 सामायिक करने से एक पौषध उतरता है।
छुटक 5 उपवास करने से एक पौषध उतरता है।
बेला करने से एक पौषध उतरता है।
20 एकासन करने से एक पौषध उतरता है।
8 दिन निरंतर लीलोतरी का त्याग करने से एक पौषध उतरता है।
8 दिन निरंतर शीलव्रत पालने से एक पौषध उतरता है।

चौबीसी स्तवन

श्री आदिनाथ अजित संभव सुमरुं जी प्रभु अभिनन्दना।
चरण जिन के शीश धर-धर करूँ जी पल-पल वन्दना।।
श्री सुमतिनाथ पद्मप्रभु जग तरण-तारण सुपार्श्व जी।
श्री चन्द्रप्रभु जी चरण वन्दत मिटत जम के त्रास जी।।
श्री सुविधि, शीतलनाथ श्री जिन श्रेयांस त्रिभुवन ईश जी।
मुनि वासुपूज्य जी के चरण में निशदिन रहो तो मेरा शीश जी।।
श्री विमलनाथ अनन्त धर्म जी का ध्यान निज उर में धरूं।
श्री शान्ति-प्रभु जी चरण स्पर्शत फिर चौरासी में न रुलूं।।
श्री कुन्थुनाथ अरह जिनेश्वर मल्लि अशरणा शरण हैं।
श्री मुनिसुव्रत स्वामी जी के पड़त पाया मिटत जामन-मरण हैं।।
श्री नेमिनाथ अरिष्टनेमि पारस पारस ध्याइये।
श्री महावीर स्वामी जी के चरण वन्दत निर्भय सदा शिव-सुख पाइये।।
ग्यारह जी गणधर बीस बिहरमान अनन्त चौबीसी ने ध्याइये।
साधु सब रत्नों की माला इनके चरणों में शीश झुकाइये।।
छोड़ सकल मिथ्यात्व को गुरु, धर्म की परीक्षा करो।
देव अरिहन्त नाम जप-तप मुक्ति-मार्ग पग धरो।।
सदा जी मंगल होत जपता यह चौबीसी नाम है।
कहत 'ऋषि जी' जान निश्चय महा सुखों की खान है।

मंगलकारी महावीर

(**तर्ज**—जो आनन्द मंगल चाहो रे...)

मंगलकारी महावीर, चरणों में शीश झुकाओ।
थे सागर-वर-गम्भीर, चरणों में शीश झुकाओ।।टेक।।

जन्मे तब आनन्द छाया, जन-जन का मन हर्षाया।
दुनिया की मेटी पीर, चरणों में शीश झुकाओ।।1।।

दीक्षा ले वन में आए, तप के घन थे बरसाए।
कर्मों की कटी जंजीर, चरणों में शीश झुकाओ।।2।।

अरिहन्त बने प्रभु ज्ञानी, आगम की पावन वाणी।
बरसी ज्यों गंगा-नीर, चरणों में शीश झुकाओ।।3।।

गौतम और चन्दन बाला, लाखों को पार कर डाला।
बदली जग की तकदीर, चरणों में शीश झुकाओ।।4।।

उनके अनुयायी मुनिवर, श्री मयाराम जी गुरुवर।
थे जपी तपी गुणधीर, चरणों में शीश झुकाओ।।5।।

गुरु मदनलाल जी स्वामी, थे संयम-पथ-अनुगामी।
मन में उनकी तस्वीर, चरणों में शीश झुकाओ।।6।।

पावन गुरुदेव सुदर्शन, श्री बद्रीप्रसाद तपोधन।
जीवन जिनका अक्सीर, चरणों में शीश झुकाओ।।7।।

गुरु-परम्परा-वन्दना

(**तर्ज**—तुम तरण-तारण)

वर्धमान जिनेन्द्र के गुणगान गाएँ सर्वदा,
गणधरों सतियों विहरमानों को वन्दन हो सदा।
श्री सुधर्मा आर्य-जम्बू आदि जो आचार्य हैं,
वे हमारे हृदय से सम्मान्य और सत्कार्य हैं।।1।।
शुद्धतम जैनत्व में ढलते गए प्रारम्भ से,
सहज संयम में रमे, रहे दूर माया-दम्भ से।
चारित्र-चूड़ामणि मुनि मयाराम जी महाराज को,
करते हैं वन्दन दिया नव-जीवन जिन्होंने समाज को।।2।।
श्री छोटेलाल जी शिष्य इनके और गण के ईश थे,
दृढ़ता, अचलता, उच्चता और स्वच्छता में गिरीश थे।
ऋजु-हृदय प्रवचन-कुशल अनुशासकों में अग्रणी,
है वन्दना उनको बने जो साधना के थे धनी।।3।।
शिष्य उनके नाथ अपने, नाथूलाल मुनीन्द्र थे,
निराकुल, निश्चिन्त, निरुपद्रव यथा अहमिन्द्र थे।
थे बहुसूत्री न फिर भी ज्ञान-मद था छू सका,
मधुर-कोमल-सरस इतने जैसे द्राक्षा-फल पका।।4।।
शिष्य इनके और नवयुग के सुधारक सुश्रमण,
व्याख्यान-वाचस्पति प्रभावक परम-भावुक मुनि मदन।
जो पुरानी और नई धाराओं में एक सेतु थे,
यत्न जिनके संघ-हितकर और संयम-हेतु थे।।5।।
शिष्य इनके मुनि सुदर्शन ज्ञान-दर्शन में कुशल,
पूर्वजों की आन पर रहते सदा ही थे अटल।
जिस जगह जाते वहीं पर धर्म की आती लहर,
ध्यान इनके चरण-कमलों में रहे आठों प्रहर।।6।।

जिनदेव और गुरुदेव की करुणा, कृपा, शुभ-दृष्टि से,
समृद्ध जीवन-क्षेत्र हो सद्धर्म-अमृत-वृष्टि से।
शास्त्र का स्वाध्याय हो, निज आत्मा का ध्यान हो,
होवे दैनिक धर्म-साधन जिससे कुछ कल्याण हो।।7।।
कुव्यसन कोई न हो, कोई न ईर्ष्या-द्वेष हो,
न्याय-संगत धन-विभव हो, दम्भ का नहीं लेश हो।
संघ में जागृत परस्पर प्रेम-सेवा-भाव हो,
धर्म की पतवार से भव-पार जीवन-नाव हो।।8।।

गुरु-मदन-स्तुति

जिनकी ज्ञान-प्रभाओं से प्रत्येक दिशा आलोकित है,
जिनके भाषण से मिथ्यामति कितनी हुई निराकृत है।
धर्म-चरण की दृढ़ता दी जिनके संयम ने जन-जन को,
उमड़ा मन गुरुवर वाचस्पति मदनमुनि के वन्दन को।।

गुरु-सुदर्शन-स्तुति

निज पवित्र चारित्र के कारण गुरुवर-सा पाया गौरव,
है समाज-जागृति का कारण जिनके प्रवचन का सौष्ठव।
तुच्छ लाभ के लिए शिथिलता संयम में न जिन्हें भाई,
उन श्रद्धेय सुदर्शन गुरुवर की सेवा है सुखदाई।।

गुरु-सुदर्शन-आरती

(**तर्ज**—जय जगदीश हरे)

गुरुदेव सुदर्शन जी, गुरुदेव सुदर्शन जी।
भाव-वंदना उनकी, है दुख-मोचन जी।।टेक।।
नाम स्मरण करते ही, मन की कली खिलती (मेरे)।
ज्ञान, ध्यान, जप, तप की, प्रेरणा है मिलती।।1।।
मन की हर चिंता का, समाधान होता (है)।
माँ की गोद में बालक, है निर्भय सोता।।2।।
जन्म स्थान रोहतक था, थे सुन्दरी-नन्दन (तुम)।
पिता चंदगी के सुत, को शत-शत वन्दन।।3।।
बाबा जग्गूमल के, पीछे चल-चल कर (हाँ)।
पाए मदन लाल जी, पावनतम गुरुवर।।4।।
जीवन को चमकाया, धर्मोद्योत किया (था)।
दुखित-खिन्न जनता को, सच्चा स्नेह दिया।।5।।
दर्शन, प्रवचन चिंतन, संयम अनुपम था (हाँ)।
करुणा, दया, क्षमा का, पावन संगम था।।6।।
सबके हृदय में बैठे, सबके सहारे हो (तुम)।
पावन चरण-शरण से, नाव किनारे हो।।7।।
अपनी कृपा का हम पर, सदा हाथ रखना (स्वामी)।
दूर न जाने देना, हमें साथ रखना।।8।।

नमस्कार-मन्त्र-स्तवन

(**तर्ज**—देवाधिदेव मेरे...)

नमस्कार मन्त्र प्यारा, जीवन का एक सहारा,
धुल जाय कलिमल सारा, जप ले अगर शुद्ध भाव से,
इसे जप ले...।।टेक।।

पहले पद अरिहन्त प्रभु का सबसे अविचल शरणा,
भव-भव के पातक हरने को चरण-वन्दना करना।
बरसाई ज्ञान की धारा, कितनों का मैल उतारा,
धुल जाए...।।1।।

है द्वितीय पद सिद्ध-प्रभु का तोड़ कर्म के बन्धन,
हुए मुक्त निर्लेप निरंजन उन्हें हृदय से वन्दन।
अन्तिम है लक्ष्य हमारा, पाएँ हम वही किनारा,
धुल जाए...।।2।।

है तृतीय आचार्य गणी, फिर उपाध्याय श्रुत-स्वामी,
पंचम पद में सर्व साधु हैं, निज पर-हित के कामी।
तप और संयम को धारा, ममता और मोह निवारा,
धुल जाए...।।3।।

पाँच पदों के नमस्कार से सब पापों का क्षय हो,
यही महामंगल है जिससे प्राप्त सर्वथा जय हो।
जिसने यह मन्त्र उचारा, उसने सब कार्य सँवारा,
धुल जाए...।।4।।

प्रभु-वन्दना

(**तर्ज**—वो दिल कहाँ से लाऊँ...)

भगवन्! तेरे चरण में, मेरी यह वन्दना है।
मन से, वचन से, तन से, सर्वस्व-अर्पणा है।।टेक।।

अन्तर् में वासना का, संसार-सा बसा है।
उसका जो अन्त लाए, तेरी उपासना है।।1।।

जो कुछ मिला है जग में, कुछ भी नहीं मिला है।
तेरे बिना ये सब ही, मन की प्रवंचना है।।2।।

जो तू है वो ही मैं हूँ, जो मैं हूँ वो ही तू है।
भौतिक उपाधियों की, ही भेद कल्पना है।।3।।

तू ध्येय है हमारा, आदर्श है हमारा।
तुझ-सा बनाने वाली, तेरी आराधना है।।4।।

पर-भाव छोड़ करके, अपना स्वरूप पाऊँ।
लेनी मुझे ये तुम से, इतनी-सी प्रेरणा है।।5।।

मीनार रोशनी की, तेरे चरण हैं भगवन्।
छूटे न ये सहारा, बस ये ही कामना है।।6।।

हम जैन-धर्म अनुयायी हैं

(**तर्ज**—उठ जाग मुसाफिर भोर भई...)

हम जैन धर्म अनुयायी हैं, सर्वत्र शान्ति फैलाएँगे।
प्रभु महावीर के सेवक हैं, बन महावीर दिखलाएँगे।।टेक।।

हिंसा से दूर रहेंगे हम, शत्रु को मित्र कहेंगे हम।
सारे ही कष्ट सहेंगे हम, जग-गुलशन को महकाएँगे।।1।।

है सत्य-शील हमको प्यारा, संयम-जीवन अपना नारा।
हम बहा त्याग-तप की धारा, जीवन आर्दश बनाएँगे।।2।।

आहार शुद्ध हम रक्खेंगे, आचार शुद्ध हम रक्खेंगे।
व्यवहार शुद्ध हम रक्खेंगे और आत्म-शुद्धि को पाएँगे।।3।।

असहाय हैं और जो निर्धन हैं, जिनके भूखे नंगे तन हैं।
जो दुखी और पीड़ित जन हैं, हम उनको गले लगाएँगे।।4।।

सम्यग्दर्शी हैं, श्रावक हैं, आस्तिक हैं, श्रमणोपासक हैं।
हम मुक्ति-मार्ग-आराधक हैं, नहीं पीछे कदम हटाएँगे।।5।।

बारह व्रतों का भजन

(**तर्ज**—जादूगर सैयां...)

महावीर वाणी, अतिकल्याणी, सुन के करो कल्याण, यदि सुख पाना है।
मन हो उजागर, तरो भवसागर, धर्म का ये जलयान, मुश्किल पाना है।
।।टेक।।

जीव को जानो, अजीव को जानो, ज्ञात पुण्य और पाप हो।
आस्रव, संवर, बन्ध, निर्जरा, मोक्ष की मन पे छाप हो।।
इन नौ तत्त्वों का ज्ञान सीखना, सिखाना है।।1।।

छोड़ो हिंसा, झूठ व चोरी, पालो नियम सदाचार के।
थोड़े से थोड़ा हो परिग्रह, अणुव्रत पाँच प्रकार के।
धारो पंचम गुणस्थान, धर्म निभाना है।।2।।

हो मर्यादा गमनागमन की, खान-पान-परिधान की।
छोड़ो प्रवृत्ति जूए, शराब की, गन्दे नाच और गान की।
ये हैं गुणव्रत गुण की खान, गुण अपनाना है।।3।।

दोनों समय सामायिक करना, भाव हों समता के घने।
द्रव्य, क्षेत्र और काल, भाव से संवर करो जितना बने।
व्रत-पौषध का हठ ठान कर्म खपाना है।।4।।

सत्-पात्रों में शुद्ध दान हो, श्रावक का ये धर्म है।
बारह व्रतों का ग्रहणासेवन नित्य-नैमित्तिक कर्म है।
रख धर्म में निश्चल ध्यान, मुक्ति में जाना है।।5।।

बारह व्रत ग्रहण करने की सरल एवं संक्षिप्त विधि

✣ सम्यक्त्व-प्रतिज्ञा ✣

1. मैं अरिहन्त देव, निर्ग्रन्थ गुरु, दयामय धर्म और 32 शास्त्र-रूप जिनवाणी पर दृढ़ आस्था रखूँगा/रखूँगी।
2. नित्यकर्म रूप से सरागी देवों (शस्त्र, स्त्री व परिग्रह के धारक) की पूजा-पाठ, भक्ति, जोत, धूपबत्ती, स्नान आदि से अर्चना नहीं करूँगा/करुँगी।
3. भगवान् की आज्ञा में विचरने वाले, शुद्ध पंच महाव्रत पालने वाले साधु-साध्वियों को ही गुरू मानूँगा/मानूँगी।
4. अहिंसा-संयम-तप-प्रधान जिन-धर्म को ही सच्चा धर्म मानूँगा/मानूँगी और इस पर दृढ़ श्रद्धा रखूँगा/रखूँगी। अपनी किसी भी प्रवृत्ति से अपने धर्म को कलंकित नहीं करूँगा/करुँगी।

आगार–राजा, बलवान्, देवता आदि के भय से, घर, परिवार, समाज व जाति आदि में क्लेश टालने के उद्देश्य से तथा आजीविका की लाचारी से मिथ्यात्वी को नमस्कार करना पड़े, तो आगार। इससे सम्यक्त्व-रत्न में अतिचार (दोष) तो लगता है, परन्तु भंग नहीं होता। योग्य प्रायश्चित लेकर अतिचार की शुद्धि करनी चाहिए।

✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣

✣ पहला : अहिंसा-व्रत ✣

बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय एवं पंचेन्द्रिय-रूप किसी त्रस जीव को जान बूझकर, बिना अपराध के, मारने का संकल्प करके मारने का पच्चक्खाण (त्याग), दो करण—तीन योग से जीवन—पर्यन्त। यथा— किसी को विष देकर, आग लगाकर, शस्त्र—प्रयोग से या दहेज आदि के कारण से मारना। गर्भपात कराना, साँप, चूहे, मेंढक, बिच्छू आदि को मारना, पक्षी के अण्डे फोड़ना और त्रस जीवों से भरे बाड़े में आग लगाना आदि।

–अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—क्रोध में आकर किसी को निर्दयतापूर्वक (1) गाढ़े बन्धन से बांधना (2) मार-पीट करना (3) कान, नाक, हाथ, पाँव आदि अवयव काटना (4) आहार-पानी बन्द करना (5) शक्ति से अधिक भार लादना।

—पाँच स्थावर जीवों की हिंसा की मर्यादा करूँगा/करूँगी।

पाँच स्थावर की मर्यादा

(1) पृथ्वीकाय—1. अपने आश्रित नए मकान, दुकान, गोदाम, फैक्ट्री आदि जीवन में..... उपरान्त बनाने का त्याग (मरम्मत का आगार)।

2. स्वयं के लिए ऊपर से नमक डालने का त्याग या महीने में ..... दिन त्याग।

(2) अप्काय—1. कच्चा पानी पीने का त्याग या महीने में ..... दिन त्याग।

2. पूर्ण स्नान महीने में ..... उपरान्त त्याग।

3. समुद्र, नदी, नहर, बाबड़ी, टैंक, ट्यूबवैल आदि में उतर कर नहाने का त्याग या वर्ष/मास में ..... उपरान्त त्याग।

(3) तेजस्काय—1. होली, लोहड़ी, रावण, कूड़ा-कर्कट व खेत आदि को जलाने व जलवाने का त्याग।

2. आतिशबाजी करने का त्याग।

(4) वायुकाय—1. ए. सी., कूलर व पंखा अपने हाथ से प्रतिदिन ..... बार से अधिक चलाने का त्याग।

2. सभी तरह के झूले झूलने का त्याग या प्रतिवर्ष ..... बार उपरान्त त्याग।

(5) वनस्पति काय—1. जीवनकाल में सम्पूर्ण हरी वनस्पति ..... के उपरान्त खाने का त्याग।

2. महीने में .... दिन हरी खाने का त्याग।

3. सचित्त वनस्पति खाने का महीने में .... दिन त्याग।

(**नोट :** घर में मनोरंजन के लिए बाग, बगीचा, गमले आदि नहीं लगाना। बिना कारण फालतू घास-पत्ते, डाली आदि नहीं तोड़ने का विवेक रखना।)

✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣

✣ दूसरा : सत्य-व्रत ✣

अपनी समझ व धारणा-अनुसार, उपयोग-सहित पाँच प्रकार का बड़ा झूठ बोलने का पच्चक्खाण, दो करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त।

पाँच प्रकार—(1) कन्या एवं वर-सम्बन्धी (2) पशु-सम्बन्धी (3) भूमि (सम्पत्ति भी)-सम्बन्धी (4) धरोहर-सम्बन्धी (5) झूठी गवाही।

बड़े झूठ की परिभाषा—'राज दंडे, लोक भंडे' अर्थात् जिस झूठ बोलने से न्यायालय में केस चले और समाज में अपयश फैले, किसी से विश्वासघात हो और बिना कसूर भारी नुकसान उठाना पड़े, धर्म व प्रतिष्ठा को ठेस लगे तथा जीवन कलंकित होवे, ऐसा झूठ बड़ा होता है, यह श्रावक के लिए त्याज्य है।

आगार—व्यापार-सम्बन्धी प्रवृत्ति का आगार, अविवेक या भूल का आगार। स्व-पर-प्राण-रक्षा का या संघ की परिस्थितियों का आगार। सरकारी कायदे नहीं पलने से कोई झूठ बोलना तो उसका आगार। आदत सुधारने की भावना रखनी।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1) किसी पर बिना विचारे आक्षेप लगाना (2) एकान्त में बातचीत करते व्यक्तियों पर मिथ्या आरोप लगाना (3) स्व-स्त्री (या पुरूष) के मर्म (गुप्त रहस्य) प्रकट करना (4) अहितकारी खोटी सलाह देना (5) विश्वासघात करके झूठा लेख लिखना।

✣ तीसरा : अचौर्य-व्रत ✣

उपयोग-सहित पाँच प्रकार की मोटी चोरी करने का पच्चक्खाण, दो करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त।

पाँच प्रकार—(1) दीवार, दरवाजे आदि में सेंध लगाकर या तोड़कर चोरी करना (2) वस्त्र, सूत, सोना आदि की गाँठ/पेटी खोलकर चोरी करना या जेब काटना (3) ताला तोड़कर या चाबी लगाकर चोरी करना (4) मार्ग में पथिक को लूटना (5)चोरी की भावना से किसी की बहुमूल्य वस्तु उठाना।

आगार—सरकारी कायदे-कानून नहीं पलने से टैक्स आदि की चोरी करनी पड़े, तो उसका आगार।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1) पूर्वोक्त पाँच प्रकार की चोरी की वस्तु लेना या खरीदना (2) चोरी करने वाले की सहायता करना (3) राज्य-नियमों के विपरीत आचरण (तस्करी, नकली बिल आदि) करना (4) जान बूझकर खोटा तोल, खोटा माप करना (5) वस्तु दिखाने एवं भाव तय करने के बाद अदल-बदल करके या मिश्रण करके देना।

✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣

✣ चौथा : ब्रह्मचर्य-व्रत ✣

सूई एवं डोरे के न्याय से (क) देव-देवी-सम्बन्धी कुशील (मैथुन)-सेवन का पच्चक्खाण दो करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त। **(ख)** स्व-स्त्री या स्व-पति के अतिरिक्त शेष मनुष्य-तिर्यंच-सम्बन्धी कुशील-सेवन का पच्चक्खाण एक करण-एक योग से जीवन-पर्यन्त। **(ग)** स्व-स्त्री अथवा स्व-पुरुष के विषय में निम्न प्रकार से मर्यादा करना।

(1) सम्पूर्ण कुशील-सेवन का त्याग या महीने में ....दिन त्याग।

(2) दिन में कुशील-सेवन का त्याग।

(3) होली, दीवाली, दशहरा, रक्षाबन्धन, महावीर-जयन्ती, आठ पर्यूषण, अष्टमी, पक्खी आदि पर्व-तिथियों पर कुशील-सेवन का त्याग।

(4) .... वर्ष बाद विवाह करने का त्याग।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1) छोटी आयु की स्व-स्त्री के साथ कुशील-सेवन करना। (2) सगाई की हुई कन्या के साथ कुशील-सेवन करना (3) अशुद्ध तरीकों से कुशील-सेवन करना (4) पराए का विवाह-नाता कराना (5) औषधि-प्रयोग से काम-विकार बढ़ाना।

✣✣

✣ पाँचवां : परिग्रह-परिमाण-व्रत ✣

अपने नाम एवं अधिकार में, निम्न प्रकार की मर्यादा से अधिक परिग्रह रखने का पच्चक्खाण, एक करण—तीन योग से जीवन-पर्यन्त। यथा—

(1) खेती-सम्बन्धी जमीन...........बीघा (2) व्यापार-सम्बन्धी जमीन........... वर्ग मीटर (3) मकान, दुकान कुल नग.......... (4) पशु की जाति .... नग (5) वाहन .... नग (6) धन........... रु० (7) हीरे .... रु० (8) सोना .... किलो प्रमाण (9) चाँदी .... किलो प्रमाण एवं परिस्थिति-अनुसार अन्य सामान।

(**नोट :** दूसरों से उधार ली हुई पूंजी, जो व्यापार में लगी है, उसे अपनी नहीं गिनूँगा/गिनूँगी। सरकार में नाम अलग-अलग हों और घर में एकमेक हों, उसे अपने परिग्रह में गिनूँगा/गिनूँगी। घर/दुकान का हिस्सा बँटने पर अन्य की वस्तु को अपनी नहीं गिनूँगा/गिनूँगी।)

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1) क्षेत्र और भवन का परिमाण (2) चाँदी और सोने का परिमाण (3) धन-धान्य का परिमाण (4) द्विपद-चतुष्पद (दासी-दास, पशु-पक्षी आदि) का परिमाण (5) कुप्य-धातु (लोहा, तांबा, पीतल, वस्त्र, पात्र आदि) का परिमाण, इन पाँच का अतिक्रमण (मर्यादा-भंग) करना।

✣ छठा : दिशा-परिमाण-व्रत ✣

पदाति (पैदल) या वाहन के द्वारा निम्न प्रकार की मर्यादा से बाहर क्षेत्र में जाने का पच्चक्खाण, एक करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त।

(1) ऊँची दिशा में हवाई जहाज से ऊपर (2) नीची दिशा में पनडुब्बी या खान से नीचे (3) तिरछी दिशा (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण) में भारत से बाहर जाने का त्याग या .... बार उपरान्त त्याग तथा कुल देश .... से अधिक में जाने का त्याग (4) हवाई जहाज, हैलीकाप्टर या समुद्री जहाज में बैठने का त्याग या वर्ष/जीवन में.................. बार उपरान्त त्याग।

आगार—भूलचूक, आकस्मिक परिस्थिति, युद्ध, दुष्काल, बीमारी, अपहरण तथा देव-सहायता से महाविदेह में तीर्थंकर-दर्शन का आगार।

-अतिचारों का यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1-2-3) ऊँची, नीची एवं तिरछी दिशा के परिमाण का अतिक्रमण करना (4) मर्यादित क्षेत्र की सीमा में वृद्धि करना (5) क्षेत्र-परिमाण भूल जाने पर या पथ का सन्देह पड़ने पर आगे चले जाना।

✣ सातवाँ : उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत ✣

इस व्रत का विधान दो प्रकार से किया गया है भोजन से और कर्म (आजीविका) से।

(1) भोजन से—अपनी समझ व धारणा-अनुसार, उपयोग-सहित

निम्न बोलों के उपरान्त शेष द्रव्यों के भोगने का पच्चक्खाण, एक करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त।

1. द्रव्य—फल, सब्जी, रोटी, दाल, मेवे, मिठाई, पेय पदार्थ एवं अन्य पदार्थों की प्रतिदिन ..... संख्या।

2. सचित्त—काला नमक छोड़कर सब नमक, चावल छोड़कर सभी अनाज, बीज-सहित सभी फल, काजू छोड़कर सभी मेवा, कच्ची सब्जी, कच्चा पानी, पानी की बर्फ, सलाद, इलायची, किशमिश, अधपकी सब्जी, कच्चा नारियल आदि सचित्त हैं। इन द्रव्यों की प्रतिदिन..... संख्या ।

3. दातुन—प्रतिदिन सचित्त (नीम, कीकर आदि)..... नग। अचित्त (नीम, बबूल, विक्को-वज्रदन्ती पेस्ट व मंजन आदि)..... नग।

4. विलेपन—प्रतिदिन साबुन नहाने का....., वस्त्र धोने का ....., तेल....., क्रीम....., पाउडर....., शैम्पू....., डाई....., लिप्स्टिक....., बिन्दी....., नेल पॉलिश....., मेंहदी..... एवं अन्य .....।

5. वस्त्र—एक वर्ष में पहनने योग्य वस्त्रों के कुल..... नग। शुद्ध रेशमी वस्त्रों का त्याग या ..... नग।

6. कुसुम—सूंघने के फूलों की जाति....., इत्र आदि ....., अगरबत्ती ....., माला की जाति.....।

(भूलचूक, दवाई, एवं परीक्षा–निमित्त सूंघने का आगार। अपना वश चले तो शादी/पार्टी में फूलों की सजावट नहीं होने देना।)

7. आभूषण—घड़ी, अंगूठी, कंगण, चैन आदि प्रतिदिन ..... संख्या। (परीक्षा, प्रतियोगिता का आगार)

8. शाक, फल, मेवा आदि—हरी सब्जी....., जमींकन्द ....., सूखी मेवा-जाति.....।

9. वाहन–एक दिन में बैठने योग्य सवारी ..... संख्या। जूते/चप्पल..... नग। (चमड़े में पंचेन्द्रिय जीवों की साक्षात् हिंसा होती है। इसके स्थान पर कपड़ा, रैक्सीन, रबड़, पी वी सी या सिन्थैटिक जूते/चप्पल पहनने की आदत डालूँगा/डालूँगी।)

(इन सभी नियमों में भूलचूक, दवाई, नौकरी एवं व्यापार की मजबूरी की आगार है।)

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1) पच्चक्खाण-उपरान्त सचित्त पदार्थ का आहार करना (2) सचित्त से युक्त पदार्थ का आहार करना (3) अपक्व का आहार करना (4) पूरी तरह से न पके पदार्थ का आहार करना (5) तुच्छ-औषधि (अधिक निस्सार भाग वाला पदार्थ) का आहार करना।

2. कर्म से—त्रस जीवों, विशेषत: पंचेन्द्रिय प्राणियों की हिंसा का निमित्त बनने वाले, महापापकर्म-बन्धक निम्नलिखित व्यापार श्रावक/श्राविका के लिए त्याज्य हैं, यथा—कसाईखाने, मुर्गीखाने, शराबखाने व कीड़ेमार दवाइयों की दुकान व कारखाने खोलना, बन्दूक, चाकू, तलवार, गोला-बारूद व आतिशबाजी बनाने की फैक्ट्री खोलना, व्यापक-स्तर पर बिल्डिंग बनाने, ईंट-भट्ठे लगाने, ट्रांसपोर्ट चलाने, शुगर-मिल, स्टील मिल, फ्लोर-मिल जैसे बड़े मिल लगाने का व्यवसाय करना, चमड़े का सामान, हाथी-दाँत, शेर-चीते की खाल इत्यादि पशु-अंगों व खालों का व्यापार या तस्करी करना, रेशम, लाख, चपड़ी, साबुदाना का थोक धन्धा करना, वेश्या-वृत्ति व जूए के अड्डे, डांस-क्लब और होटल आदि को चलाना, खान खोदना, वन काटना, वन जलाना, नदी, नहर, तालाबों की भरती करके सुखाना तथा हिंसक सामान बनाने/बेचने वाली कम्पनियों के शेयर खरीदना आदि।

✣ आठवाँ : अनर्थदण्ड-विरमण-व्रत ✣

निष्प्रयोजन जीव-हिंसा एवं आध्यात्मिक प्रमाद को बढ़ाने वाले निम्नलिखित चार प्रकार के अनर्थदण्ड का पच्चक्खाण, दो करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त।

(**नोटः** सभी नियमों का पच्चक्खाण सम्भव न हो, तो यथाशक्ति पच्चक्खाण का भाव बनाएँ। जिनका पच्चक्खाण लेना चाहें, उनके ऊपर ✓ निशान लगाएँ।)

(1) अपध्यानाचरित (आर्तध्यान-प्रधान चिन्तन)—इष्ट-वियोग, अनिष्ट-संयोग, अर्थ (धन)-नाश, रोग, शोक, मरण, भय आदि के प्रसंग पर रोना-पीटना। ईर्ष्या व द्वेष के वशीभूत होकर दूसरों का अशुभ चिन्तन करना। आरम्भ (हिंसा)-जन्य कार्यों को देखकर प्रसन्न होना आदि।

(2) प्रमादाचरित (प्रमाद-पूर्ण आचरण)—ताश, चौपड़, जूआ, शतरंज, होली खेलना। गुटका, पानमसाला, जर्दा, गांजा,.सुल्फा, भांग, तमाखू खाना। पटाखे फोड़ना, धूम्रपान करना। सिनेमा, वीडियो, सर्कस, नाटक, जादू के खेल देखना। बैण्ड-पार्टी, नृत्य-गान-पार्टी के ऊपर रुपयों की बौछार करना। सरे बाजार भंगड़ा करना, अश्लील गीत गाना, शादी/पार्टी में शराब पीना-पिलाना, शराब के स्टाल लगाना। छः काय के जीवों की हिंसा हो- ऐसे पंखे, बिजली, मोटर, मशीन खुले छोड़ना, मीठे व चिकने पदार्थों को उघड़े छोड़ना, बर्तन झूठे छोड़ना, घर में कीड़े, मकोड़े, काक्रोच जमा होने देना आदि। **खाद्य-पदार्थ**—यथा, मांस, अण्डा, चर्बी, जिलेटिन एवं अन्य हिंसक अंशों से युक्त केक, पेस्ट्री, बिस्कुट, टॉफी, च्युइंगम, चाकलेट, जैली, मैगी, पैटी, आइसक्रीम आदि का सेवन करना। **हिंसा-जन्य सौन्दर्य-प्रसाधन**—यथा, शैम्पू, सैन्ट, लिप्स्टिक, खिजाब, क्रीम, पाउडर, लोशन, इत्र, रेशम तथा चमड़े से निर्मित जूते, सैण्डल, टोपी, पर्स, बैल्ट, घड़ी के फीते आदि का प्रयोग करना।

(**नोट**— स्थानक में आते समय पारदर्शी तथा विकार-वर्धक वस्त्र, चमड़े के जूते-चप्पल व रेशमी परिधान पहनकर नहीं आना चाहिए। महिलाओं को सिर ढ़क कर आना चाहिए तथा प्रवचन के समय एवं पर्यूषण के आठ दिनों में टी० वी०, खेल-तमाशे आदि नहीं देखने चाहिएँ।)

(3) हिंसक-शस्त्र-प्रदान—हिंसाकारी साधन यथा, चाकू, छुर्रा, कैंची, ऊखल-मुसल, मिक्सर, सिलबट्टा, हमामदस्ता, हल, कुदाली, कस्सी, चक्की, घास-कटर, प्रैस, ज्यूसर आदि बिना मांगे दूसरों को देना, भेंट में आतिशबाजी देना, पशु-पक्षियों की दौड़ आयोजित करना या उन्हें आपस में लड़ाना, कीड़ेमार दवाइयाँ या उनको छिड़कने की टंकी आदि उधार देना।

(4) पापकर्मोपदेश—बिना कारण, बिना जिम्मेवारी सावद्य (पापयुक्त) कार्यों की प्रेरणा देना, यथा, मकान-दुकान बना लो, फैक्ट्री लगा लो, बाग लगा लो, ट्यूबवैल या मशीन लगा लो, जमीन खरीद लो, फसल बो लो, दवाई छिड़क लो, उसकी शादी उससे करवा दो, पार्टी कर लो, अमुक वाहन या इलैक्ट्रोनिक सामान खरीद लो; पशु-पक्षी पाल लो आदि।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—**(1)** काम-विकार उत्पन्न करने वाली कथा करना **(2)** भाण्डों की तरह कुत्सित चेष्टाएँ करना **(3)** धृष्टता-पूर्वक निरर्थक, असत्य व व्यर्थ वचन बोलना **(4)** ऊखल, मुसल आदि हिंसाकारी शस्त्रों का अधिक संग्रह करना **(5)** उपभोग-परिभोग-योग्य वस्तुओं का आवश्यकता से अधिक संग्रह करना।

—एक करण-एक योग—करूँ नहीं, काया से।

—एक करण-तीन योग—करूँ नहीं, मन से वचन से काया से।

—दो करण-तीन योग—करूँ नहीं कराऊँ नहीं, मन से वचन से काया से।

✣ नवमाँ : सामायिक-व्रत ✣

सांसरिक कार्यों से निवृत्त होकर प्रतिदिन दो घड़ी (48 मिनट) के लिए धर्म-उपासना करना, दो करण-तीन योग से जीवन-पर्यन्त (अथवा एक मास में ....., एक वर्ष में ..... सामायिक करना)।

सामायिक के उपकरण—आसन, पूंजनी, चोलपट्टा, दुपट्टा, मुखवस्त्रिका, माला, आनुपूर्वी एवं अन्य धार्मिक उपकरण।

—सामायिक में द्रव्य, क्षेत्र, काल एवं भाव, इन चार प्रकार की शुद्धियों का विवेक रखना चाहिए। नौ पाठ कण्ठस्थ करके विधि-सहित सामायिक ग्रहण करनी चाहिए और 32 दोष टालने का यत्न करना चाहिए।

सामायिक भव-जल-तारिणी-साधना है। सुख, दुख, रोग, शोक, सूतक, पातक सभी अवस्थाओं में अवश्य-करणीय है। सामायिक से पूर्व स्नान आवश्यक नहीं है। बहनों को रेशमी वस्त्रों में तथा श्रृंगार-प्रसाधनों का प्रयोग करके सामायिक नहीं करनी चाहिए।

आगार—बीमारी, शादी-विवाह, बाहर जाना एवं विशेष परिस्थिति का।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—(1,2,3) मन, वचन, काया की अशुभ प्रवृत्ति करना (**4**) सामायिक की स्मृति न रखना (**5**) समय पूर्ण हुए बिना सामायिक पार लेना।

✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣

✣ दसवाँ : देशावकाशिक-व्रत ✣

प्रतिदिन प्रात:काल से प्रारम्भ करके निम्नलिखित 14 नियमों की मर्यादा के उपरान्त शेष द्रव्यों के प्रयोग करने का पच्चक्खाण एवं प्रतिदिन तीन मनोरथ का चिन्तन करना।

(**नोट**—यह व्रत छठे दिशाव्रत एवं सातवें उपभोग-परिभोग-परिमाण-व्रत का संक्षिप्त रूप है। पूर्वोक्त दो व्रत जीवन-पर्यन्त के लिए ग्रहण किए जाते हैं। प्रस्तुत व्रत प्रतिदिन लिया जाता है। दिशा-मर्यादा दो करण-तीन योग से तथा द्रव्य-मर्यादा एक करण-तीन योग से ग्रहण की जाती है। 14 नियम की प्रतिदिन गणना के लिए अलग पुस्तिका बनानी चाहिए।)

चौदह नियम

(1) सचित्त-पदार्थ-संख्या ..... उपरान्त त्याग।

(2) द्रव्य-संख्या ..... उपरान्त त्याग।

(3) विगय (दूध, दही, तेल, घी, मीठा) ..... उपरान्त त्याग।

(4) जूते, चप्पल ..... उपरान्त त्याग।

(5) ताम्बूल (सौंफ, सुपारी, पान आदि) ..... उपरान्त त्याग।

(6) वस्त्र-संख्या ..... उपरान्त त्याग।

(7) सुगन्धित-पदार्थ (इत्र, धूपबत्ती आदि) संख्या ..... उपरान्त त्याग।

(8) वाहन-संख्या ..... उपरान्त त्याग।

(9) शयन (मकान में जाने की) संख्या ..... उपरान्त त्याग।

(10) विलेपन (साबुन, शेविंग-क्रीम, तेल आदि) ..... उपरान्त त्याग।

(11) ब्रह्मचर्य-पालन या रात्रि/दिन की मर्यादा।

(12) दिशा-ऊपर....., नीचे....., पूर्व में..... कि० मी०, पश्चिम में..... कि० मी०, उत्तर में ..... कि०मी०, दक्षिण में ..... कि० मी० उपरान्त त्याग।

(13) स्नान (छोटी, बड़ी) त्याग या मर्यादा.....।

(14) भोजन ..... बार उपरान्त त्याग।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—**नियमित सीमा के बाहर से** (1) कोई वस्तु मंगवाई हो (2) भिजवाई हो (3) शब्द करके चेताया हो, (4) रूप दिखाकर अपने भाव प्रकट किए हों (5) कंकर आदि फैंककर दूसरे को बुलाया हो।

तीन मनोरथ का चिन्तन

आरम्भ परिग्रह तज कर, लूँ पंच महाव्रत धार।

अन्त समय आलोचना, करूँ संथारो सार॥

अर्थात्—(1) वह दिन मेरा धन्य होगा, जिस दिन मैं आरम्भ और परिग्रह को घटाऊँगा, (2) वह दिन मेरा परम धन्य होगा, जिस दिन मैं पंच महाव्रत-धारी अणगार बनूँगा, (3) वह दिन मेरा परम-परम धन्य होगा, जिस दिन में संलेखना-संथारा करके पण्डित-मरण को प्राप्त करूँगा।

✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣✣

✣ ग्यारहवाँ-पौषध-व्रत ✣

सांसारिक कार्यों से निवृत्त होकर प्रतिपूर्ण आठ प्रहर के लिए या निम्नलिखित मर्यादानुसार पौषध, व्रत आदि को धारण करना, यथायोग्य योग एवं करण-अनुसार, प्रतिमास या प्रतिवर्ष की अवधि में।

(1) अष्टप्रहरी पौषध-प्रतिमास............, प्रतिवर्ष............ संख्या।

(2) चारप्रहरी पौषध-प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष.................।

(3) दया (रात्रि-सहित)-प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष..............।

(4) उपवास-प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

(5) आयम्बिल-प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

(6) एकाशन-प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

(7) पौरसी-प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

(8) नवकारसी–प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

(9) प्रतिक्रमण–प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

(10) रात्रि–सवंर–प्रतिमास ...., प्रतिवर्ष ....।

—अतिचारों को यथाशक्ति टालने की कोशिश करूँगा/करूँगी।

पौषध-व्रत के अतिचार—(1) शय्या–संस्तारक (मकान एवं बिस्तर) की प्रतिलेखना (आँखों से देखना) न की हो या सम्यक् (भली प्रकार से) न की हो। (2) शय्या–संस्तारक की प्रमार्जना (रजोहरण से सफाई) न की हो, या सम्यक् न की हो (3) उच्चार–प्रस्त्रवण–भूमि (मल–मूत्र–भूमि) की प्रतिलेखना न की हो, या सम्यक् न की हो (4) उच्चार–प्रस्त्रवण–भूमि की प्रमार्जना न की हो या सम्यक् न की हो (5) पौषध के सभी नियमों का सम्यक् पालन न कियां हो।

✣ बारहवाँ-अतिथि-संविभाग-व्रत ✣

साधु–साध्वियों को प्रासुक (निर्जीव) एवं एषणीय (दोष–रहित) अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य, वस्त्र, पात्र, चौंकी, पट्टा, मकान, औषध आदि वस्तुओं को निष्काम भाव से बहराने की भावना रखना।

✦ आहार–पानी बहराने के मुख्य नियम ✦

(1) साधु/साध्वी के निमित्त दोष लगाकर आहार पानी आदि तैयार नहीं करना। न ही उनके लिए बाजार से कोई वस्तु खरीदना।

(2) अपने घर पधारे साधु/साध्वी को प्रासुक एवं एषणीय आहार–पानी बहराना। उनके ठिकाने पर या विहार–यात्रा में अपने घर से टिफन ले जाकर नहीं बहराना। इससे साधु का संयम और श्रावक का धर्म भ्रष्ट हो जाता है।

(3) मुनियों के घर पधारते समय घण्टी नहीं बजाना। न ही किसी को आवाज देकर, ताली बजाकर या अन्य संकेत द्वारा सावधान करना।

(4) आहार बहराते समय विनयपूर्वक प्रार्थना ही करना चाहिए, जिद्द नहीं। झोली या पात्रों को भी पकड़ना नहीं चाहिए।

(5) आहार-पानी का योग न मिलने पर 'कुछ न कुछ ले जाओ', 'हमारा दिल दुखेगा', 'नहीं तो हम स्थानक में नहीं आएँगे,' इत्यादि निरर्थक शब्द नहीं बोलना। अन्तराय समझकर आगे के लिए विवेक बढ़ाना।

(6) रसोई में या बीच रास्ते में सचित्त वस्तुओं को इधर-उधर बिखेर कर नहीं रखना। आंगन, कमरे या रसोई का फर्श भी गीला नहीं करना। मुनियों को फर्श के ऊपर से या उसके ऊपर बोरी/पटरी रखकर जाना भी नहीं कल्पना।

(7) घर में सचित्त-अचित्त वस्तुओं को इकट्ठी ही एक साथ अलमारी में, टेबल पर या एक कागज पर नहीं रखना।

(8) आहार देते समय किसी वस्तु को धरती में फटकारना नहीं, फूँक नहीं मारनी, घुटने के ऊपर से कोई वस्तु नीचे नहीं गिरानी।

(9) आहार देते समय कच्चा पानी, कच्ची सब्जी, कच्चे धान्य, नमकदानी, आग का चूल्हा (गैस यदि एक चालू है और एक बन्द, तो बन्द की तरफ से भी नहीं देना। उसका भी संघट्टा होता है) चालू स्टोव या हीटर, प्रैस और फोन आदि का स्पर्श नहीं करना।

(10) मुनियों के आने से पूर्व बिजली के बल्ब, रेडियो, टी०वी०, ए०सी०, कूलर, पंखे आदि चल रहे हों तो बन्द नहीं करने चाहिएँ तथा बन्द हों तो चालू नहीं करने चाहिएँ। उन्हें पूर्व-स्थिति में ही रहने देना चाहिए।

(11) आहार देने से पूर्व या पश्चात् सचित्त जल से हाथ या पात्र (कड़छी, चम्मच, कटोरी आदि) नहीं धोना। हरेक पदार्थ के लिए अलग-अलग नए बर्तन प्रयोग नहीं करना। सचित्त जल से हाथ, बाल या शरीर गीला

हो, तो भी स्वयं आहार नहीं देना। जरूरत हो, तो प्रासुक जल से हाथ धोने चाहिएँ, वह पानी नाली में न जाए।

(12) कच्ची सब्जी, बीजदार फल सब्जी, साबुत बादाम-गीरी, मुनक्का, किशमिश, कच्चा नारियल, इलायची, खीरा (खीरे का रायता भी), टमाटर, ककड़ी, सैंधा नमक तथा पानी की बर्फ (प्रासुक पानी की जमाई बर्फ भी) सचित्त है, इनको नहीं बहराना। सभी अचार डालने के तीन दिन बाद अचित्त होते हैं, इससे पूर्व नहीं बहराने चाहिएँ।

(13) आहार देते समय चूल्हे पर रोटी को जलने या दूध को निकलने नहीं देना चाहिए। घर के किसी सदस्य को उसे तत्काल संभाल लेना चाहिए।

(14) जिस जल का वर्ण, गन्ध, रस एवं स्पर्श परिवर्तित हो जाए, वह जल प्रासुक होता है। बर्तनों का धोवन, आटा-दाल-चावल का धोवन एवं गर्म जल प्रासुक होता.है, वही साधु को देना चाहिए। घर के सदस्यों को धोवन-पानी के संग्रह करने का और प्रासुक-जल पीने का अभ्यास डालना चाहिए, ताकि साधुओं को निर्दोष जल सुलभ हो सके।

(15) आहार-पानी बहराने के बाद अगर वस्तु कम पड़ जाए तो सन्तोष भाव से ऊनोदरी (जरूरत से कम सेवन) कर लेनी चाहिए, दोबारा वह वस्तु तैयार नहीं करनी चाहिए।

(16) जैन-मुनि-वेष-धारक किसी भी साधु-साध्वी को अपने हाथ से कभी भी कोई अकल्पनीय वस्तु—रुपये, पैसे, दूषित आहार-पानी आदि नहीं देना।

(17) आहार देकर घर के अन्दर साधुओं से बिना कारण विस्तारपूर्वक प्रश्न-चर्चा नहीं करनी चाहिए। पुनः पुनः मंगल-पाठ सुनाने का आग्रह भी नहीं करना चाहिए।

(**नोट :** साधु-साध्वियों को निष्काम भाव से, भक्ति-पूर्वक आहार-पानी आदि बहराने वाला शुभ-दीर्घ-आयु, सम्यक्त्व एवं तीर्थंकर-गोत्र को बांधता है, ऐसा शास्त्रों का लेख है।)

—अतिचारों को टालने की यथाशक्ति कोशिश करूँगा/करूँगी।

अतिचार—साधु-साध्वियों को न देने की बुद्धि से (1) अचित्त वस्तु को सचित्त वस्तु के ऊपर रखना (2) अचित्त वस्तु को सचित्त वस्तु से ढक देना (3) साधु-साध्वियों के भोजन का समय बीत जाने पर आहार-पानी की विनति करना (4) अपनी वस्तु को दूसरे की कह देना (5) दूसरों के प्रति ईर्ष्या-भाव रखकर दान देना या दान देकर पश्चात्ताप करना।

✣ प्रतिज्ञा-सूत्र ✣

उपरोक्त सभी व्रत मैंने अपनी समझ-प्रमाण, उपयोग-सहित इच्छा-पूर्वक श्री..... महाराज से लिए हैं।

सन् ..... मास ..... तारीख.....

स्थान ..... हस्ताक्षर .....

नोट—(1) उपरोक्त व्रतों में बाद में कोई नई बात मालूम पड़े, तो उस समय जैसी परिस्थिति हो, उस प्रमाण रखने का आगार।

(2) किसी भी व्रत में कोई दोष लग जाए, तो गुरु-चरणों में जाकर आलोचना करके प्रायश्चित ग्रहण करना।

(3) पक्खी के दिन या एक मास में एक बार सभी व्रतों एवं मर्यादाओं को एक बार अवश्य पढ़ना।

(4) सामायिक के सब पाठ एवं प्रतिक्रमण-सूत्र को कण्ठस्थ करने का भाव बनाना।

परिशिष्ट

7 वें व्रत में फलों एवं सब्जियों की मर्यादा करने के लिए विवरणिका।

फलों के नाम

1. आम	2. अंगूर	3. केला	4. अमरूद
5. संतरा	6. सेब	7. पपीता	8. चीकू
9. नाशपाती	10. खरबूजा	11. अनार	12. शरीफा
13. नारियल	14. खुरबानी	15. आलूबुखारा	16. अनन्नास
17. लीची	18. जामुन	19. तरबूज	20. शहतूत
21. सिंघाड़ा	22. गन्ना	23. बेर सभी प्रकार से	
24. रसभरी	25.	26.	

सब्जी

1. भींडी	2. टींडसी	3. तोरी	4. टमाटर
5. घीया	6. कद्दू	7. बैंगन	8. करौंदा
9. करेला	10. मटर	11. हरा चना	12. भुट्टा
13. मोगरी	14. गवारफली	15. सेम फली	16. लोभिया फली
17. फूल गोभी	18. गाँठ गोभी	19. पत्ता गोभी	20. मूली के पत्ते
21. प्याज पत्ती	22. पोदीना	23. पालक	24. बथुआ
25. कच्ची मिर्च	26. शिमला मिर्च	27. मेथी के पत्ते	28. आँवला
29. ककड़ी	30. काचरा (कचरी)	31. नीबू	32. फरासबीन
33. कटहल	34. अमरख	35.	36. .....

जमीकन्द

1. आलू	2. प्याज	3. लहसुन	4. शकरकन्द
5. अरवी	6. शलजम	7. मूली	8. गाजर
9. अदरक			

नोट—जो वस्तु नहीं खानी हो उसके ऊपर X लगा दें।